CHAPTER 12

CHAPTER 13

CHAPTER 14

CHAPTER 15

Appendix

Patna University I. A. Questions

:o:

CHAPTER I

NATURE, SCOPE, METHODS AND BRANCHES OF PSYCHOLOGY.

Q. 1 What is a science? Discuss how Psychology is a science.

विज्ञान (Science) का शाब्दिक अर्थ तो विशेष ज्ञान होता है, परन्तु यह विज्ञान की समुचित परिभाषा नहीं कही जा सकती। हाँ, तो विश्व के किसी एक विशेष विभाग (Department) से आबद्ध, नियमबद्ध (Systematic) ज्ञान-समूह को हम विज्ञान कहते हैं। विज्ञान का सम्बन्ध जिस विभाग से रहता है, वह उसी में नया-नया अन्वेषण करता है और इस प्रकार अपने ज्ञान कोष की आवृद्धि करता है। रसायन शास्त्र या भौतिक शास्त्र एक विज्ञान है। इसी प्रकार और भी कई विज्ञान हैं। अब हमें यह देखना है कि वस्तुतः विज्ञान की विशेषताएँ क्या हैं।

विज्ञान की पहली विशेषता यह है कि इसका सम्बन्ध विश्व के किसी एक विशेष विभाग से रहता है और वह उसी में नया-नया अन्वेषण करता है। साधारणतः हमलोगों का ज्ञान बहुमुखी होता है, क्योंकि हम लोग सभी विषयों के सम्बन्ध में कुछ न कुछ जानना चाहते हैं। परन्तु विज्ञान सभी विषयों

के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने की कोशिश नहीं करता, बल्कि अपने आलोच्य-विषय (Subject matter) के ही सम्बन्ध में पूरी जानकारी रखने की कोशिश करता है। इससे यह नहीं समझना चाहिए कि यह अन्य विषयों की उपेक्षा करता है। यह अन्य विषयों का भी अध्ययन करता है, किंतु अपनी जरूरत से अधिक नहीं।

वैज्ञानिक नियमों का एकरूप (Uniform), प्रतिपन्न (Exact), सुव्यवस्थ (Systematic) एवं संगठित (Organized) होना ही विज्ञान की दूसरी विशेषता है। यह विशेषता साधारण मनुष्य के ज्ञान मे नहीं पाई जाती है, क्योंकि साधारण ज्ञान शृङ्खला-विहीन होता है और उसमें एकरूपता इत्यादि की भी विशेषताएँ नहीं रहती है।

विज्ञान की तीसरी विशेषता यह है कि यह किसी विषय की सत्यता पर स्वतः विश्वास नहीं करता, बल्कि उस सत्यता की जाँच के लिए प्रयोग (Experiment) का आश्रय लेता है जिसके लिए औजारों (Apparatus) की आवश्यकता पड़ती है। परंतु औजार प्रयोग के अनिवार्य अंग नहीं है।

वैज्ञानिक अपने प्राप्त निर्णयों (Conclusions) की सत्यता पर विशेष जोर नहीं देता, बल्कि वह बारबार इस बात की भी कोशिश करता है कि कोई ऐसा तत्व तो नहीं है जो उसके निर्णय को खण्डित कर सकता है। यदि उसे किसी ऐसे तत्व की जानकारी हो जाती है तो वह उसका स्वागत करता है और उसके आधार पर अपने निर्णय की सत्यता की जाँच करता है।

विज्ञान परिणाम (Result) की महत्ता नहीं चाहता, बल्कि वह पद्धति (Method) विशेष पर ही जोर देता है, क्योंकि वैज्ञानिक परिणाम भी सापेक्ष (Relative) होता है।

इनके अतिरिक्त विज्ञान की और भी कई विशेषताएँ हैं, किंतु वे गौण हैं। अब विज्ञान की इन विशेषताओं की कसौटी पर कसकर हमें यह देखना है कि मनोविज्ञान विज्ञान है कि नहीं।

हाँ, तो जिस प्रकार विज्ञान का आलोच्य विषय निश्चित रहता है उसी प्रकार मनोविज्ञान के अध्ययन का विषय (मन) भी निश्चित है। अतएव, विज्ञान की यह विशेषता मनोविज्ञान में वर्तमान है।

मनोविज्ञान मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन प्रयोग तथा निरीक्षण के द्वारा करता है और पुनः उन क्रियाओं का वर्गीकरण करता है। यहाँ भी मनोविज्ञान वैज्ञानिक पद्धति का ही अनुसरण करता है।

मनोविज्ञान अन्य विज्ञानों की भाँति अपने आलोच्य विषय से आबद्ध अन्य विषयों का भी अध्ययन करता है, जैसे, नाड़ी-तंत्र, इत्यादि।

इतना ही नहीं, बल्कि मनोविज्ञान के निर्णय एकरूप, प्रतिपन्न एवं संगठित होते हैं जो अन्य विज्ञानों में भी पाया जाता है। फिर भी मनोविज्ञान मन और बाह्य विश्व की सत्ता पर भी विश्वास करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि मनोविज्ञान में विज्ञान की सभी विशेषताएँ पाई जाती हैं, अतएव मनोविज्ञान भी एक विज्ञान है।

Q. 2 What are the characteristics of a positive science ? How can you say that psychology is a positive science ?

मनोविज्ञान एक समर्थक या विधायक विज्ञान (Positive science) है कि नहीं, इसकी विवेचना करने के पहले हमें यह जानना आवश्यक है कि समर्थक विज्ञान किसे कहते हैं या इसकी विशेषताएँ क्या हैं ?

हाँ, तो विज्ञान दो प्रकार का होता है, (१) समर्थक (Positive) और (२) आदर्श निर्धारक (Normative)। समर्थक विज्ञान हम उस विज्ञान को कहते हैं जो अपने आलोच्य विषय का अध्ययन उसी अवस्था में करता है जिस अवस्था मे वह रहता है। भौतिकशास्त्र या रसायन शास्त्र (Chemistry) समर्थक विज्ञान है, क्योंकि यह अपने आलोच्य विषय का अध्ययन उसकी वास्तविक अवस्था में ही करता है। आदर्श-निर्धारक विज्ञान हम उसे कहते हैं, जो अपने आलोच्य विषय का अध्ययन उसके असली रूप में न करके एक माध्यम (Standard) के द्वारा करता है। आदर्श निर्धारक विज्ञान का संबन्ध "क्या होना चाहिए" से रहता है और "क्या है" से नहीं।

अब विधायक विज्ञान की विशेषताओं का उल्लेख करते समय यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि यह अपने आलोच्य विषय की वास्तविक अवस्था का अध्ययन करता है। इसीलिए कभी-कभी इसे वर्णनात्मक विज्ञान भी कहते हैं। यह आदर्श के पचड़े में नहीं पड़ता है॥

इसकी दूसरी विशेषता यह है कि यह अपने आलोच्य-विषय का अध्ययन पक्षपात रहित होकर करता है।

इतना ही नहीं, बल्कि आलोच्य विषय का अध्ययन करते समय किसी आदर्श के पचड़े में नहीं पड़ता है। इसका सम्बन्ध 'चाहिए' से नहीं वरन् "है" से रहता है।

अब हमें यह देखना है कि मनोविज्ञान एक विधायक विज्ञान है कि नहीं।

यदि हम विचार करें तो मालूम होगा कि मनोविज्ञान मानसिक अवस्थाओं का अध्ययन उनकी वास्तविक अवस्था में करता है। यह अपने अध्ययन में किसी प्रकार का पक्षपात नहीं करता। इसके लिए तो जैसे एक विद्वान् के मन की महत्ता है वैसे ही एक मूर्ख-मन की भी। तीसरी बात यह है कि मनोविज्ञान मानसिक क्रियाओं का अध्ययन किसी माध्यम से नहीं करता, बल्कि वे जिस अवस्था में रहती हैं उसी अवस्था में उनका अध्ययन करता है। कहने का अभिप्राय यह है कि मनोविज्ञान का सम्बन्ध मानसिक क्रियाओं की वास्तविक अवस्था से ही रहता है, 'क्या होना चाहिए' से नहीं। इस प्रकार हम देखते हैं कि मनोविज्ञान में समर्थक विज्ञान की सभी विशेषताएँ विद्यमान हैं, अतः यह भी एक समर्थक विज्ञान ही है, आदर्श निर्धारक विज्ञान नहीं।

Q. 3 What is a natural science? Show how psychology is a natural science

प्रकृति विज्ञान (Natural science) से हमारा तात्पर्य

उस विज्ञान से है जो प्राकृतिक दृश्यों के किसी एक विभाग से आबद्ध रहता है तथा उसी क्षेत्र में अन्वेषण तथा अध्ययन के द्वारा अपने ज्ञान को बढ़ाता है। यह प्राकृतिक दृश्यों की व्याख्या प्राकृतिक साधनों के ही द्वारा करता है। यहाँ हमें यह भी याद रखना चाहिए कि यह प्राकृतिक दृश्यों के नियमों का प्रतिपादन एकरूपता (Uniformity) और कारण-कार्य (Cause-effect) के सिद्धान्तों पर करता है। यह अपने नियमों की सत्यता को जानने के लिए विश्लेषण, (Analysis) तुलना (Comparison) और प्रयोग (Experiments) आदि पद्धतियों का सहारा लेता है।

मनोविज्ञान भी प्रकृतिविज्ञान के समान एक निश्चित विषय को ही अपने अध्ययन का विषय बनाता है। अपने नियमों की सत्यता के लिये कई प्रयोगात्मक परीक्षाओं का आश्रय लेता है। यह मानसिक प्रक्रियाओं की व्याख्या शारीरिक तथा वाह्य उत्तेजनाओं के आधार पर करता है। प्रकृतिविज्ञान कारण-कार्य का उपयोग करता है और मन तथा अन्य भौतिक (Physical) पदार्थों की सत्ता में विश्वास करता है। इतना ही नहीं, वल्कि यह भी जानता है कि मन में समझने की शक्ति भी विद्यमान है। इस प्रकार जब हम प्रकृतिविज्ञान के साथ मनोविज्ञान की तुलना करते हैं तो हमें मानना पड़ता है कि मनोविज्ञान भी एक प्रकृतिविज्ञान है।

यहाँ इस सम्बन्ध मे यह उल्लेखनीय है कि प्रकृति विज्ञान भौतिक गति (Physical motion) के आधार पर किसी तत्व

(Element) की व्याख्या करता है। प्रायः इसका विश्लेषण परमाणु तथा प्रोटन्स आदि में होता है। यदि प्रकृति विज्ञान की इस विशेषता पर हम ध्यान दें तो हमें मालूम होगा कि इस अर्थ में मनोविज्ञान प्रकृतिविज्ञान कदापि नहीं है। मनोविज्ञान यद्यपि मन की सभी अवस्थाओं का अध्ययन करता है, परन्तु वे कभी भी रसायनिक तत्व (Chemical element) में परिवर्तित नहीं किए जा सकते। यदि हम प्रकृतिविज्ञान के क्षेत्र को इतना संकीर्ण कर देते हैं तो मनोविज्ञान को प्रकृति विज्ञान नहीं कह सकते। परन्तु मनोविज्ञान के क्षेत्र को इस प्रकार सीमित कर देना श्रेयस्कर प्रतीत नहीं होता।

हमारी मानसिक प्रक्रियाएँ उतनी ही प्राकृतिक हैं, जितना कि अन्य भौतिक (Physical) या रासायनिक पदार्थ। अन्तर केवल इतना ही है कि अन्य पदार्थ सरल (Simple) हैं, किन्तु मानसिक क्रियाएँ जटिल (Complex) हैं। अतएव, जब मानसिक प्रक्रियाएँ भी प्राकृतिक है तो उनका अध्ययन करने वाला शास्त्र भी प्राकृतिक ही कहा जाएगा।

कुछ लोगों का कथन है कि मनोविज्ञान के निर्णय एवं नियम प्रतिपन्न नहीं होते, इसलिए इसे प्रकृतिविज्ञान कहना उचित नहीं है। लेकिन ऐसा कहने वालों को यह समझना चाहिए कि मनोवैज्ञानिक निर्णय एवं नियम भी प्रतिपन्न ही होते हैं और यदि कभी उनकी प्रतिपन्नता में अभाव या कमी आती है तो आलोच्य विषय (Subject matter) के गत्यात्मक स्वरूप (Dynamic nature) के ही कारण। मनोविज्ञान का

आलोच्य विषय और उसके अध्ययन की पद्धति (Method) भी अन्य विज्ञानों से विचित्र है। परन्तु इन विचित्रताओं के होते हुए भी मनोविज्ञान एक प्रकृतिविज्ञान ही है।

Q. 4 Show with concrete examples how Psychology deals with experience and behaviour. (1944 A).

मनोविज्ञान एक ऐसा विज्ञान है जो मन (Mind) का ही अध्ययन करता है। परन्तु यह मन किसी व्यक्ति विशेष या जीव विशेष का नहीं होता, बल्कि सामान्य मन का ही अध्ययन करना मनोविज्ञान का काम है। विज्ञान, जैसा कि हम लोग जानते हैं सर्वव्यापक या विश्वजनीन (Universal) होता है। इसलिए मनोविज्ञान को सर्वव्यापक बनने के लिए सभी मनुष्यों या जीवों के मन का अध्ययन करना पड़ता है। परन्तु मन एक ऐसी शक्ति है जो पूर्णतः आत्मगत (Subjective) है। हमारा मन दूसरे का मन नहीं हो सकता और न दूसरे का मन हमारा। तब प्रश्न यह होता है कि जब मन पूर्णतः व्यक्तिगत है तब सब के मन का अध्ययन क्योंकर हो सकता है।

इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि हम अपने मन का अध्ययन तो अपने आप अन्तर्निरीक्षण (Introspection) के द्वारा करते हैं। परन्तु मन कोई ऐसा स्थूल पदार्थ नहीं है जिसे कि हम कहीं एक जगह देख सकें। यह तो एक ऐसी शक्ति या प्रक्रिया है जो हमारे विभिन्न अनुभवों के द्वारा अभिव्यक्त होती है। मन की प्रायः तीन क्रियाएँ होती हैं, जैसे,

चितन, ज्ञानात्मक (Thinking) भाव, भावात्मक (Feeling) और इच्छा क्रियात्मक (Conation)। जब हमें सुख और दुःख का अनुभव होता है, तो उस समय कौन-कौन सी मानसिक क्रियाएँ होती हैं, इसको जानने के लिए हमें अन्तर्दर्शन ही करना पड़ता है। विचार करने, स्मरण करने, और सीखने इत्यादि की प्रक्रियाओं के समय भी हम अन्तर्निरीक्षण के ही द्वारा अपने मन की हालत को जानते हैं। जब हमें किसी कार्य को करने की इच्छा होती है या जब हम किसी कार्य को करते हैं तो उस समय की मानसिक अवस्था का अध्ययन हम प्रत्यक्षरूप से अन्तर्निरीक्षण के ही द्वारा जानते हैं। ये जितनी भी हमारी मानसिक क्रियाएँ हैं, इन्हीं सब को हम अपने अनुभव (Experience) के नाम से व्यक्त करते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि हमें अपने मन की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन करने के लिए हमें अपने विभिन्न अनुभवों का ही अध्ययन करना पड़ता है। कारण कि हमारी विभिन्न मानसिक क्रियाएँ और हमारे अनुभव एक ही हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि मनोविज्ञान अनुभव (Experience) का ही अध्ययन मन को जानने के लिए करता है।

हम अपने मन को तो अपने अनुभवों के आधार पर जान जाते हैं, लेकिन दूसरे के मन को कैसे जानते हैं? हम दूसरे के मन को देख तो सकते नहीं, इसलिए दूसरे के मन को जानने के लिए हमें उसके व्यवहार को समझने की जरूरत पड़ती है। हमारे व्यवहार हमारी मानसिक अवस्थाओं के ही द्योतक हैं,

क्योंकि मन का वास्तविक दिग्दर्शन मनुष्य की क्रियाओं में ही होता है। जब हम स्वयं दुःखी होने पर आँसू बहाए रहते हैं तो दूसरे को भी आँसू बहाता हुआ देखकर अपने अनुभव के आधार पर जान जाते हैं कि वह दुःखी है और इस प्रकार दूसरे के मन को भी हम उसके व्यवहार को देखकर जान जाते है।

यहाँ यह स्मरणीय है कि व्यवहार (Behaviour) स्वतः निरर्थक होता है, इसमें सार्थकता तभी आती है जब उसकी व्याख्या अनुभव के आधार पर की जाती है। मान लीजिए, कोई आदमी हँस रहा है या कोई चीज खा रहा है और मुस्किरा रहा है, परन्तु यदि हम कभी हँसने का या खाते समय मुस्किराने का अनुभव स्वयं न किए हों तो उसके ये व्यवहार निरर्थक प्रतीत होंगे। इसलिए व्यवहार को समझने के लिए अनुभव की नितांत आवश्यकता है। अतएव मनोविज्ञान के अध्ययन का विषय अनुभव और व्यवहार दोनों ही हैं जिसके द्वारा कि हम अपने और दूसरे के मन का अध्ययन कर सकते हैं।

Q. 5 Psychology is the positive science of experience and behaviour interpreted in terms of experience. Justify this definition.

मनोविज्ञान अनुभूति और व्यवहार का वह समर्थक विज्ञान है जो अनुभूति के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाता है।

यह मनोविज्ञान की वर्तमान परिभाषा है। इसकी सार्थकता को सिद्ध करने के लिये यदि हम इस परिभाषा में प्रयोग किये

गये पारिभाषिक शब्दों की व्याख्या कर दें तो हमें इस परिभाषा के दोष और गुण मालूम हो जायेंगे।

पहले हम यह देखें कि मनोविज्ञान समर्थक विज्ञान क्योंकर है। जैसा कि हमलोग जानते हैं विज्ञान दो तरह का होता है समर्थक या वर्णनात्मक और दूसरा आदर्श निर्धारक। आदर्श निर्धारक विज्ञान का कार्य किसी माध्यम को स्थापित करना होता है। वह किसी वस्तु का यथार्थ वर्णन नहीं करता, वल्कि यह व्यक्त करता है कि इसे कैसा होना चाहिये। किन्तु, समर्थक विज्ञान किसी आदर्श के पीछे नहीं पड़ता; वल्कि अपने आलोच्य विषय के वास्तविक रूप का ही वर्णन करता है। वह अपने आलोच्य विषय के वर्णन या विवेचन में किसी प्रकार का पक्षपात नहीं करता। कर्त्तव्य शास्त्र एक आदर्श निर्धारकविज्ञान है, क्योंकि यह किसी मनुष्य के कार्य के उचित अनुचित का विवेचन करता है। हमारा मनोविज्ञान आदर्श निर्धारक नहीं, बल्कि विधायक (Positive) या वर्णनात्मक विज्ञान है, क्योंकि यह मन का अध्ययन किसी (Standard) आदर्श को लेकर नहीं करता, वल्कि उसकी यथार्थ अवस्था का ही वर्णन करता है।

अब हमें इस परिभाषा में व्यवहृत व्यवहार और अनुभूति की व्याख्या करनी अनिवार्य है। पहले हम अनुभूति को लें। अनुभूति जीव की वह प्रतिक्रिया है जिससे कि वह गुजरता है। इस तरह से अनुभव शारीरिक या मानसिक दोनो प्रकार का हो सकता है, किन्तु यथार्थतः अनुभव का प्रयोग मानसिक अवस्था के ही अर्थ में करना चाहिये। चूंकि मनोविज्ञान मन का

अध्ययन करता है और हमारी विभिन्न मानसिक अवस्थाएं हमारे मन की ही द्योतक हैं, इसलिये हम अपने मन का अध्ययन अपनी अनुभूतियों द्वारा ही कर सकते हैं। हमारी अनुभूतियाँ पूर्णतः आत्मगत (Subjective) होती हैं जिसका अनुभव हम स्वयं कर सकते हैं। इन अनुभूतियों के अध्ययन के लिये हमें अन्तर्निरीक्षण (Introspection) का आश्रय लेनी पड़ता है। और इसके द्वारा हम अपने मन को पूर्णतः जानने में समर्थ होते हैं। किन्तु मनोविज्ञान वैयक्तिक नहीं है, बल्कि सामान्य है। यह सामान्य मन का ही अध्ययन करता है। किन्तु अन्तर्निरीक्षण के द्वारा तो हम अपनी ही अनुभूतियों को जानते हैं, दूसरे की अनुभूतियों को इसके द्वारा कदापि जानने में समर्थ नहीं हो सकते। किन्तु मनोविज्ञान को सर्वव्यापक बनाने के लिये दूसरे की मानसिक अनुभूतियों को जानना आवश्यक है।

अतः दूसरों की अनुभूतियों को जानने के लिये उनके व्यवहार का अध्ययन आवश्यक है। क्योंकि प्राणी की मानसिक अनुभूतियों का दिग्दर्शन उसके व्यवहार से होता है। जब मनुष्य दुःखी होता है, रोता है और सुखी होता है तो हँसता है। उसके रोने और हँसने को देखकर हम साधारणतः समझ जाते हैं कि वह दुःखी है या सुखी। यह ज्ञान हमें अपनी अनुभूतियों के ही आधार पर होता है, क्योंकि हम स्वयं सुख के समय हँसते या दुःख के समय रोते हैं। यों तो व्यवहार स्वतः निरर्थक होता है, किंतु जब उसकी व्याख्या अनुभव के आधार पर की जाती है तो यह सार्थक बन जाता है। जो मनुष्य

कभी मिठाई न खाया हो वह मिठाई के स्वाद की अनुभूति को व्यक्त नहीं कर सकता। कहने का तात्पर्य यह है कि हम दूसरे के व्यवहार का निरीक्षण करके अपनी अनुभूतियों के आधार पर उसकी मानसिक स्थिति का पता लगाते हैं। खाना, पीना, सोना, दौड़ना इत्यादि व्यवहार के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार विवेचन करने से हमे मालूम होता है कि सचमुच मनोविज्ञान वह समर्थकविज्ञान है जो अनुभूति और व्यवहार का अध्ययन अनुभूति के माध्यम से करता है। अतएव मनोविज्ञान की यह परिभाषा बिलकुल उचित जँचती है।

Q. 6 Discuss briefly the scope and uses of psychology.

मनोविज्ञान के विषय विस्तार (Scope) का वर्णन करने के लिए इस बात पर ध्यान रखना आवश्यक है कि सर्व प्रथम हम मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानसिक क्रियाओं का अध्ययन करते हैं। हम अपनी सभी प्रकार की मानसिक क्रियाओं और अवस्थाओं का अध्ययन अन्तर्दर्शन (Introspection) के द्वारा करते हैं। इसी के सहारे हम अपने हर्ष, दुःख और विषाद इत्यादि का अनुभव करते हैं। अतएव मनोविज्ञान के अध्ययन का विषय हमारी अनुभूतियाँ (Exepriences) है।

हम अपने मन का अध्ययन तो अन्तर्दर्शन के द्वारा, अपनी अनुभूतियों के द्वारा कर लेते हैं, परन्तु दूसरे के मन का अध्ययन न तो हम अन्तर्दर्शन के ही द्वारा कर सकते हैं और न अनुभव के ही द्वारा। तब दूसरे के मन को हम क्योंकर

जान सकते हैं ? हम सभी जानते हैं कि मनुष्य के व्यवहार, वेश-भूषा, चाल-चलन इत्यादि सभी उसके मन के ही द्योतक होते हैं। अतएव हम दूसरे के मन को उसके व्यवहार के अध्ययन के द्वारा जान सकते हैं। अतएव मनोविज्ञान के अध्ययन का विषय व्यवहार (Behaviour) भी है।

फिर भी मन और शरीर का सम्बन्ध बहुत ही घनिष्ठ है, इसलिए शारीरिक क्रियाओं का असर मानसिक क्रियाओं पर भी पड़ता है। इस प्रकार मानसिक क्रियाओं को अच्छी तरह जानने के लिए शारीरिक क्रियाओं को जानना भी जरूरी है। अतएव मनोविज्ञान ने अध्ययन का विषय नाड़ीतंत्र, (Nervous System) ज्ञानेन्द्रियाँ (Sense organs) और पेशियाँ इत्यादि भी है।

मानसिक क्रियाओं के आविर्भाव के कारण वाह्य पदार्थ होते हैं, अतएव मनोविज्ञान बाहरी पदार्थों का भी अध्ययन उस अंश तक करता है जहाँ तक कि उनका सम्बन्ध मानसिक क्रियाओं से रहता है। कहने का अभिप्राय यह है कि मनोविज्ञान उन बाहरी चीजों का भी अध्ययन करता है जिनका सम्बन्ध हमारी मानसिक क्रियाओं से रहता है।

मनोविज्ञान विभिन्न जीवों के मन का अध्ययन उनकी विभिन्न अवस्थाओं में करके उनकी तुलना मानव मनसे करता है। साथ ही साथ यह संस्कृति, पुराण, भाषा तथा साहित्यादि का भी अध्ययन करता है। वह प्रत्येक जाति, व्यक्ति या वंश की विचित्रताओं का भी अध्ययन करता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मनोविज्ञान का विषय विस्तार अत्यन्त प्रशस्त है। यह अनुभव, व्यवहार, शारीरिक प्रक्रियाओं एवं वाह्य उत्तेजनाओं का अध्ययन करता है। मन की विभिन्न अवस्थाएँ भी इसके अध्ययन का विषय हैं। स्वप्न, (Dream) भ्रम और पागलपन आदि भी इसके अध्ययन के विषय हैं। इस प्रकार प्रायः यह मन से आवद्ध सभी अवस्थाओं एवं विषयों और पदार्थों का अध्ययन करता है।

मनोविज्ञान की उपयोगिता का वर्णन करने के लिए यह व्यक्त कर देना आवश्यक है कि इसकी उपयोगिता आधुनिक संसार के सभी क्षेत्रों में है।

सबसे पहली बात तो यह है कि हम मनोविज्ञान के ही प्रसाद से अपने आपको जानने में समर्थ होते हैं। जीवन को सफल बनाने के लिए मनुष्य को विभिन्न वातावरणों में अभियोजित करने की आवश्यकता पड़ती है और यह अभियोजन मनोवैज्ञानिक परिज्ञान से ही संभव है। इसी के द्वारा हम अपनी विभिन्न मानसिक क्रियाओं और योग्यताओं का ज्ञान प्राप्त करते है तथा अपने गुण और दोषों को जानने में समर्थ होते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि मनुष्य अपने आपको जानने में समर्थ मनोविज्ञान के ही प्रसाद से होता है।

शिक्षा-क्षेत्र में भी मनोविज्ञान की कम उपयोगिता नहीं है। प्राचीन काल में सभी प्रकार के विद्यार्थियों को एक ही प्रकार की शिक्षा दी जाती थी और परिणाम यह होता था कि बहुत से विद्यार्थी पढ़ने से जी चोराते थे और उन्हें विद्यार्थी-जीवन भार

स्वरूप प्रतीत होता था। परन्तु आधुनिक युग में अब सभी विद्यार्थियों की बुद्धि के अनुसार ही शिक्षा दी जाती है। योग्यता का ज्ञान प्राप्त करके शिक्षा देने से विद्यार्थियों का जीवन अत्यन्त सुखमय बनाया जा रहा है। शिक्षकगण भी मनोविज्ञान का ज्ञान प्राप्त करके अपने विषय को रुचिकर बनाने का प्रयत्न करते हैं जिससे विद्यार्थियों का मन वर्ग भवन में लगा रहता है।

न्यायालयों में मनोविज्ञान के ही आधार पर अब सत्य: मूठ का निर्णय किया जाता है। इस समय ऐसे-ऐसे प्रयोगों का व्यवहार हो रहा है कि न्याय करने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती।

मनोविज्ञान के द्वारा खोए हुए स्वास्थ्य को भी अपनाया जाता है। आज बहुत सी असाध्य बीमारियों की चिकित्सा मनोवैज्ञानिक ढंग से की जा रही है। जो बीमारियाँ पहले असाध्य समझी जाती थीं वे बात की बात में अब अच्छी की जाती हैं।

व्यापार में भी मनोविज्ञान की उपयोगिता कम नहीं है। आधुनिक युग में मनोवैज्ञानिक ढंग से व्यापार करने में दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति हो रही है। इसके अतिरिक्त अब विभिन्न व्यवसायों के लिए कर्मचारियों का चुनाव मनोवैज्ञानिक ढंग से ही होता है।

शासन पद्धति मे भी अब मनोविज्ञान का ही आश्रय लिया जाता है। शासन करने के लिए शासित वर्ग की चित्तवृत्तियों का ज्ञान आवश्यक है जो मनोविज्ञान के ही द्वारा जाना जा-

सकता है।

सारांश यह कि अब कोई भी जीवन का क्षेत्र ऐसा नहीं जिसमें मनोविज्ञान की जरूरत नहीं पड़ती है। अब मनुष्य के सभी कार्य मनोविज्ञान के ही आधार पर होते हैं। इसलिए इसकी उपयोगिता सभी क्षेत्रों में है।

Q. 7 What is psychology ? Explain the methods employed in it. (1944 S.)

मनोविज्ञान क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न रूप से दिया है। कुछ लोगों के अनुसार मनोविज्ञान आत्मा (Soul) का विज्ञान है। परन्तु मनोविज्ञान की यह परिभाषा कई कारणों से अमान्य है। कुछ लोगों के अनुसार मनोविज्ञान अनुभव (Experience) का विज्ञान है, परन्तु यह परिभाषा भी कई कारणों से दोष पूर्ण है। तीसरे पक्ष का कहना है कि मनोविज्ञान चेतना (Consciousness) का विज्ञान है, लेकिन यह परिभाषा भी निर्दोष नहीं है। इसी प्रकार मनोविज्ञान की कई परिभाषाएँ दी गई हैं, लेकिन सभी परिभाषाओं में कुछ दोष विद्यमान है। हम काम चलाने के लिए यही कह सकते हैं कि मनोविज्ञान वह विधायक विधान है जो अनुभव तथा व्यवहार का अध्ययन अनुभव के माध्यम से करता है। कहने का अभिप्राय यह है कि मनोविज्ञान वह शास्त्र है जो मनुष्य या अन्य जीवों (Organism) के मन का अध्ययन उसकी विभिन्न अवस्थाओं में करता है।

वस्तुतः मनोविज्ञान एक ऐसा शास्त्र है जो मानव स्वभाव को समझकर उसके व्यवहार तथा अनुभव को नियंत्रित करना चाहता है। इसका मुख्य ध्येय मानव मन का अध्ययन करना ही है।

मनोवैज्ञानिक अध्ययन के लिए कई पद्धतियाँ हैं, किंतु उनमें अन्तर्निरीक्षण, (Introspection) बाह्यदर्शन (Extrospection) और प्रयोग पद्धतियाँ (Experimental methods) मुख्य हैं। हम यहाँ उनकी व्याख्या संक्षेप में करेंगे।

(a) अन्तर्निरीक्षण (Introspection) अन्तर्दर्शन का शाब्दिक अर्थ है, भीतरी निरीक्षण। लेकिन भीतरी निरीक्षण किसका ? उत्तर में यही कहा जा सकता है कि भीतरी या आन्तरिक निरीक्षण, मन का। जैसा कि हमलोग जानते हैं मनोविज्ञान मन का विज्ञान है, इसलिए अपने मन की विभिन्न क्रियाओं और स्थितियों का अध्ययन करने के लिए हमलोगों को अपने मन का आन्तरिक निरीक्षण करना पड़ता है। जब हमलोग अपने मन का अध्ययन करना चाहते हैं तो उस समय अपने ध्यान को चारों ओर से हटाकर अपने मन की क्रियाओं पर लगा देते हैं और इस प्रकार अपने मन की अवस्था को जानने में समर्थ होते हैं। इसी के द्वारा हम अपने मन को अच्छी तरह जानते हैं। यही एक पद्धति ऐसी है जिसके जरिए मन का स्पष्ट साक्षात्कार होता है।

परन्तु अन्तर्दर्शन की पद्धति बहुत ही कठिन है और कभी

कभी तो असंभव हो जाती है। पहली बात तो यह है कि अन्तर्निरीक्षण के समय मन को कर्त्ता और कर्म दोनों का काम करना पड़ता है। इसलिए कभी-कभी कठिनाई उपस्थित हो जाती है। परन्तु यह कठिनाई अभ्यास से दूर हो जाती है। दूसरी बात यह है कि जब हमलोग किसी स्थिति विशेष का अध्ययन करना चाहते हैं तो वह अवस्था ही विलीन हो जाती है, इसलिए अन्तर्निरीक्षण असंभव हो जाता है। इस कठिनाई को भी अभ्यास तथा स्मृति के द्वारा दूर किया जा सकता है। तीसरी कठिनाई यह है कि जिस प्रकार हमलोग स्थूल पदार्थों का निरीक्षण कर सकते हैं उस प्रकार मानसिक क्रियाओं का नहीं; क्योंकि हमलोगों का ध्यान निरंतर भंग होता रहता है। परन्तु यह कठिनाई भी अभ्यास के द्वारा दूर की जा सकती है। चौथी कठिनाई इस पद्धति में यह है कि इस पद्धति के द्वारा एक ही मानसिक स्थिति का अध्ययन कई मनोवैज्ञानिक नहीं कर सकते। परन्तु यह दोष तो एक ही प्रकार की मानसिक स्थिति को अध्ययन करके हटाया जा सकता है। इसी प्रकार इस पद्धति में और भी कई दोष हैं, परन्तु सभी दोष अभ्यास तथा प्रयास के द्वारा दूर किए जा सकते हैं।

वस्तुतः अन्तर्निरीक्षण की पद्धति मनोविज्ञान में एक विचित्र पद्धति है जो और विज्ञानों में संभव नहीं। इसी पद्धति के द्वारा हम अपने मन को जानने में समर्थ होते हैं और इसी के प्रसाद से मनोविज्ञान आज एक विज्ञान होने का दावा करता है। यदि

यह पद्धति मनोविज्ञान के अन्तर्गत नहीं होती तो मन का अध्ययन कठिन ही नहीं, अपितु असंभव हो जाता।

(b) बाह्यदर्शन (Extrospection) हम अन्तर्दर्शन के द्वारा अपनी मानसिक स्थितियों का अध्ययन करते हैं, लेकिन बाह्यदर्शन के द्वारा दूसरों के व्यवहारों का अध्ययन करके उनकी मानसिक क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त करते हैं। मनुष्य के व्यवहार से ही उसकी मानसिक अवस्था का पता लगता है, क्योंकि जैसी स्थिति मन की रहती है वैसा ही व्यवहार भी होता है। जब कोई आदमी प्रसन्न रहता है तो वह हँसता है और दुःखी रहता है तो वह रोता है। हाँ, तो इस पद्धति के द्वारा दूसरे के व्यवहारों का अवलोकन करके अपने अनुभव के आधार पर उसके मन की हालत का पता लगाते हैं।

परन्तु इस पद्धति में भी कई दोष हैं। पहला दोष तो यह है कि हम अपने अनुसार ही दूसरे को समझते हैं, लेकिन यह दोष निष्पक्ष होकर अध्ययन करने से दूर हो सकता है। दूसरा दोष इसमें यह है कि कभी-कभी हमलोग किसी के प्रति अपना विचार पहले ही से बना लेते हैं, इसलिए व्यवहार का अध्ययन दोषपूर्ण होता है। परन्तु यह दोष भी निष्पक्ष अध्ययन से दूर हो सकता है। तीसरा दोष इस पद्धति में यह है कि मनुष्य का व्यवहार आडम्बर से परिपूर्ण होता है, इसलिए व्यवहार के द्वारा मन को समझने में गलती हो जाती है। यह दोष धैर्य से व्यवहार का अध्ययन करने से दूर हो

सकता है। इसके अतिरिक्त कभी-कभी एक ही व्यवहार कई मानसिक स्थितियों के द्योतक होते हैं, परन्तु ऐसे अवसर पर भी हम धैर्य से निरीक्षण करके इस दोष से वंचित हो सकते हैं।

ये उपर्युक्त दोनों पद्धतियाँ मनोविज्ञान के लिए आवश्यक हैं। अन्तर्निरीक्षण के द्वारा हम अपने मन को जानने में समर्थ होते हैं और वाह्यदर्शन के द्वारा दूसरे के मन को जानते हैं। यदि अन्तर्दर्शन की पद्धति न हो तो हम अपने मन को नहीं जान सकते और वाह्यदर्शन न हो तो दूसरे के मन को। इस प्रकार मनोविज्ञान के लिए इन, दोनों पद्धतियों का होना अनिवार्य है, इन दोनों में से अकेले किसी एक पद्धति से काम नहीं चल सकता। अतएव ये दोनों पद्धतियां अन्योन्याश्रयी हैं।

(C) प्रयोगात्मक पद्धति (Experimental method)

यह पद्धति भी निरीक्षण के अन्तर्गत है, किंतु इस पद्धति में किसी मानसिक क्रिया का अध्ययन पूर्वनिश्चित (Pre-arranged) और नियन्त्रित अवस्था (controlled condition) में किया जाता है। प्रयोग अन्तर्निरीक्षण तथा वाह्यनिरीक्षण दोनों पद्धतियों का आश्रय लेता है। किसी भी नियम की सत्यता को सिद्ध करने के लिए प्रयोगात्मक पद्धति का सहारा लेना आवश्यक है। स्मृति, विस्मृति, सीखना, भाव और संवेग इत्यादि सभी मानसिक अवस्थाओं का अध्ययन इस विधि से किया जाता है। इसी पद्धति के कारण आज मनोविज्ञान बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है। परन्तु इसमें भी कई दोष हैं। पहला दोष तो यह है कि मन की

इसी अवस्थाओं पर प्रयोग नहीं हो सकता। यदि हम किसी व्यक्ति के नाड़ीतंत्र का अध्ययन करना चाहें तो हम उसके किसी अंग को छिन्न-भिन्न नहीं कर सकते, इसके लिए तो अन्य जानवरों पर ही प्रयोग करना पड़ेगा। दूसरा दोष इस पद्धति में यह है कि प्रयोग के समय मानसिक अवस्थाओं की वास्तविकता में अन्तर पड़ जाता है, इसलिए हमें मन की स्वाभाविक अवस्था का पता नहीं चलता। परन्तु यह दोष बारम्बार के प्रयोग से दूर हो जाता है। जो कुछ भी हो यह पद्धति मनोविज्ञान के लिए बहुत ही जरूरी है, क्योंकि इसके बिना यह कभी उपयोगी नहीं हो सकता था।

Q. 8. What do you consider to be the proper method of psychology ? (1945 A.)

मनोविज्ञान की उपयुक्त पद्धति के सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिकों में मतभेद है, क्योंकि कुछ लोगों का कहना है कि अन्तर्दर्शन ही मनोविज्ञान की मुख्य पद्धति है। परन्तु दूसरे पक्ष के लोग इस मत का खण्डन करते हैं और वाह्यदर्शन को ही मनोविज्ञान की मुख्य पद्धति मानते हैं। ये दोनों ही मत आंशिक सत्य हैं। सच्ची बात तो यह है कि ये दोनों पद्धतियाँ मनोविज्ञान के लिए आवश्यक हैं, क्योंकि अकेले कोई पद्धति मनोविज्ञान के लिए पर्याप्त नहीं है, बल्कि ये दोनों एक दूसरे के अन्योन्याश्रयी हैं। अन्तर्दर्शन और वाह्यदर्शन की विशेष व्याख्या तथा गुण-दोष के विवेचन के लिए प्रश्न नम्बर ७, (सन् १९४४ S) का उत्तर देखें।

Q. 9 Define psychology and show that it includes both experience and behaviour. (1945 S.)

यों तो मनोविज्ञान की कई परिभाषाएँ हैं, किंतु आधुनिक परिभाषा निम्नाङ्कित है, "मनोविज्ञान वह विधायक विज्ञान है जो अनुभव तथा व्यवहार की व्याख्या अनुभव के आधार पर करता है"।

मनोविज्ञान विधायक विज्ञान इसलिए है कि यह मानसिक क्रियाओं का अध्ययन उनकी वास्तविक अवस्थाओं में बिना किसी आदर्श और माध्यम के करता है। इसके लिए सभी मन समान महत्ता के हैं। यह मन का अध्ययन निष्पक्ष भाव से करता है। अतएव यह एक विधायक या समर्थक विज्ञान है।

व्यवहार तथा अनुभव पदों की उपयुक्तता और व्याख्या के लिए प्रश्न नम्बर ४ सन् १९४४ A का उत्तर देखें। उसके पढ़ने से यह भलीभाँति स्पष्ट हो जाएगा कि मनोविज्ञान व्यवहार (Behaviour) और अनुभव (Experience) का अध्ययन क्यों और क्योंकर करता है।

Q. 10 Explain and illustrate how psychology deals with experience and behaviour. (1946A)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ४, १९४४ A का उत्तर देखें।

Q. 11 What are the important branches of Psychology? Briefly show your acquaintance with any two of them. (1945 A)-

मनोविज्ञान की निम्नांकित प्रमुख शाखाएँ हैं :

(१) सामान्य मनोविज्ञान (General Psychology), (२) वैयक्तिक मनोविज्ञान (Individual Psychology) (३) बाल मनोविज्ञान (Child Psychology), (४) समाज मनोविज्ञान (Social Psychology), (५) पशु मनोविज्ञान (Animal Psychology), (६) लोक मनोविज्ञान (Folk Psychology), (७) जाति मनोविज्ञान (Race Psychology), (८) विश्लेषणात्मक मनोविज्ञान (Analatical Psychology), (६) असाधारण मनोविज्ञान (Abnormal Psychology), (१०) प्रयोगात्मक मनोविज्ञान (Experimental Psychology), (११) शारीरिक मनोविज्ञान (Physiological Psychology) और (१२) व्यावहारिक मनोविज्ञान (Applied psychology).

इनमें से हम समाज मनोविज्ञान और असाधारण मनोविज्ञान का संक्षिप्त परिचय देंगे ।

(१) समाज मनोविज्ञान यह एक ऐसा मनोविज्ञान है जो किसी व्यक्ति विशेष के व्यवहार का अध्ययन समाज के अन्तर्गत करता है । किसी व्यक्ति का व्यवहार अकेले में और समाज में कैसा होता है, इसी का अध्ययन करना इस मनोविज्ञान का काम है । इसके अन्तर्गत समाज की बुराइयों, त्योहारों, प्रचार, नेतृत्व, संघर्ष इत्यादि का अध्ययन किया जाता है । अभिप्राय यह है कि यह मनुष्य के व्यवहार का अध्ययन समाज के विभिन्न पहलुओं में करता है ।

(२) असाधारण मनोविज्ञान जिस प्रकार सामान्य मनोविज्ञान सामान्य मनुष्यों का अध्ययन करता है उसी प्रकार असाधारण मनोविज्ञान मनुष्य के असाधारण व्यवहारों का अध्ययन करता है। फिर असाधारण व्यक्तियों को सामान्य बनाने की कोशिश करता है। इसके अन्तर्गत मानसिक बीमारियों, स्वप्नों इत्यादि का अध्ययन किया जाता है। फ्रायड, एडलर और युंग ने इस मनोविज्ञान में बहुत ही अन्वेषण किए हैं। आज इसके प्रसाद से हजारों असाधारण व्यक्ति सामान्य बनाए जा रहे हैं। यह मनोविज्ञान हमारे लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुआ है।

Q. 12–Distinguish between the method of objective observation and that of Introspection. (1946 S).

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७, १९४४ S. के उत्तर में अन्तर्दर्शन और बाह्यदर्शन की व्याख्या देखें।

Q. 13 Define Psychology and explain the methods employed in it. (1947 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ७, १९४४ S. के उत्तर को देखें।

Q. 14 What is the proper subject matter of Psychology ? Indicate its scope. (1947S.)

मनोविज्ञान का उपयुक्त आलोच्य विषय (Proper subject matter) अनुभव और व्यवहार है। यह सभी जीवों

की मानसिक और शारीरिक क्रियाओं का अध्ययन करता है।
इसकी विशद व्याख्या के लिए प्रश्न नम्बर ४, १९४४ A. का उत्तर देखें।

मनोविज्ञान के विषय-विस्तार (Sccpe) के लिए प्रश्न नम्बर ६ का उत्तर देखें।

Q. 15 what are the main uses of the study of Psychology ? (1918 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६ के उत्तर को देखें।

Q. 16 Write notes on -

(a) Abnormal Psychologr.

(b) Social Psychology. (1948 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ११, १९४६ A. का उत्तर देखें।

Q. 17 What is introspection ? Point out its merits and defects as a method of Psychology. (1949A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ७ (१९४४ स०) का उत्तर देखें।

Q. 18 What do you understand by environment ? Discuss how adaptation to environment is brought Psychologically . (1949 A.)

जीव (Organism) भिन्न जो कुछ भी उसके चारों ओर

विद्यमान रहता है उसी को उस जीव का वातावरण या Environment कहते हैं। यदि सिंह जंगल में निवास करता है तो उस सिंह के अतिरिक्त जो पेड़-पौधे तथा अन्य जीव उसके अगल-बगल और आगे-पीछे मौजूद रहते हैं वे ही सब उसके वातावरण के अन्तर्गत आते हैं। यहाँ यह भी स्मरणीय है कि उत्तेजना का प्रभाव किसी इन्द्रिय विशेष के द्वारा जीव पर प्रत्यक्षतया पड़ता है जिसका ज्ञान भी उसे रहता है। किन्तु वातावरण का प्रभाव जीव पर किसी इन्द्रिय विशेष के द्वारा नहीं पड़ता बल्कि उसमें सभी इन्द्रियों का हाथ रहता है और उत्तेजनाएँ भी एक न रहकर बहुत-सी रहती हैं। उनका प्रभाव भी अप्रत्यक्षतया ही पड़ता है इसलिए उसका ज्ञान भी जीव को अधिकतर नहीं रहता है।

वातावरण सामाजिक या भौतिक होता है। इसका प्रभाव भी जीव पर अमिट पड़ता है। जीव के प्रत्येक क्षण में जीव वातावरण से प्रभावित होता रहता है। भौतिक वातावरण वाह्य एवं आन्तरिक दोनों प्रकार का होता है। नदी, पर्वत, पेड़, समाज आदि को वाह्य एवं रक्त संचार इत्यादि को आन्तरिक वातावरण कहते हैं।

इस प्रश्न के दूसरे भाग का उत्तर देते हुए यह ध्यान में रखना चाहिये कि हम मनुष्यों में भी वे ही मूल प्रवृत्तियाँ जन्म के समय विद्यमान रहती हैं जो अन्य जीवों में किन्तु अनुभव के आधार पर मनुष्य जाति की मूल प्रवृत्तियाँ

संशोधित हो जाती हैं और अन्य जीवों को नहीं। जैसा कि हमलोग जानते हैं, जीव वातावरण से अलग नहीं रह सकता। मनुष्य भी वातावरण में ही रहता है और वातावरण के सम्पर्क स्वरूप ही तरह-तरह की प्रतिक्रिया भी करता है; क्योंकि वातावरण हमेशा उत्तेजना का ही काम करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि वातावरण जब किसी प्रकार से जीव को प्रभावित करता है तो वह अपनी सत्ता को कायम रखने के लिये किसी प्रकार की प्रतिक्रिया को करता है।

अब प्रश्न यह होता है कि अभियोजन (Adaptation) किसे कहते हैं? इसके उत्तर में हम यही कहना पर्याप्त समझते हैं कि जीव का अपने को वातावरण के अनुरूप बना लेनी ही अभियोजन (Adaptation) कहलाता है। यदि ठंढे देश का जीव ठंढक को बर्दास्त करने में समर्थ होता है तब हम कहते हैं कि वह अपने को उस वातावरण में अभियोजित कर लिया है। यदि कोई आदमी सीनेमा के करीब सोने में असमर्थ है तो हम यही कह सकते हैं कि वह अपने को वातावरण में अभियोजित नहीं कर सका है। किन्तु वातावरण में अभियोजित करने का मतलब अपने व्यक्तित्व को खो देने का नहीं होता, बल्कि अपने व्यक्तित्व को उससे अलग बनाए रखने का भी होता है। वातावरण में पूर्ण रूपेण अभियोजित होने से व्यक्तित्व भी पूर्णतः विकसित होता है।

अब प्रश्न यह होता है कि अभियोजन (Adaptation) होता कैसे है?

इस प्रश्न का उत्तर देते समय हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि जब जीव उत्पन्न होता है तो वह वातावरण में बिल्कुल अभियोजित नहीं रहता है। इसलिये वह क्रमशः आवश्यकतानुसार विभिन्न परिस्थितियों में अपने आपको विभिन्न प्रतिक्रियाओं के द्वारा अभियोजित करता है। उदाहरण के लिये, जब बच्चा उत्पन्न होता है तब अपनी क्षुधा को बुझाने के लिये रोता है और अपनी मा का स्तन परिग्रहण करके संतुष्ट होता है। प्रारम्भ में प्रायः अभियोजन अनुकरणात्मक होता है अथवा मूलप्रवृत्यात्मक होता है। बाद में अनुभव के कारण उन प्रतिक्रियाओं में संशोधन होता जाता है और जीव इस तरह अपने को परिस्थिति के अनुकूल बनाने का अभ्यस्त हो जाता है कि उसे उस प्रक्रिया की चेतना भी नहीं होती। जाड़े में गर्म कपड़ा पहनना और गर्मी में पतला कपड़ा पहनना अभियोजन का ही परिचायक है। कहने का अभिप्राय यह है कि जीव अपने को वातावरण में विभिन्न वांछित एवं अवांछित प्रतिक्रियाओं द्वारा अभियोजित करता है। यदि परिस्थिति के अनुरूप प्रतिक्रिया होती है तो सामान्य अभियोजन होता है और यदि परिस्थिति के प्रतिकूल प्रतिक्रिया होती है तो विकृत अभियोजन होता है। जो जीव अपने को परिस्थिति के अनुकूल बनाने में असमर्थ होता है उसे असाधारण (Abnormal) जीव (organism) कहते हैं।

Q. 19. What do you understand by behaviour ? Discuss why it is studied in Psychology. (1949 S.)

(इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ५ का उत्तर पढ़िये)

Q. 20 Discuss clearly the subject-matter of Psychology. What are its branches ? (1950 A.)

इस प्रश्न के पहले भाग के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १४ का और दूसरे भाग के लिये प्रश्न नम्बर ११ का उत्तर देखें।

Q. 21 Describe what you understand by stimulus response and adaptation to environment. (1950 A.)

Stimulus और Response की व्याख्या के लिये प्रश्न नम्बर.........का उत्तर देखें।

Adaptation to environment (वातावरण में अभियोजन) का तात्पर्य होता है कि जीव (organism) परिस्थिति से अलग नहीं रह सकता है। हम सभी वातावरण में ही अपना जीवन-यापन करते हैं। वातावरण विभिन्न प्रकार का होता है और यही उत्तेजना का काम करता है। जब वह जीव को प्रभावित करता है तब वह (Organism) अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिये किसी प्रकार की प्रतिक्रिया करता है। वातावरण में अभियोजन का मतलब होता है अपने को वातावरण के अनुरूप बना लेना। यदि जाड़े के दिन में कोई आदमी जाड़ा बर्दाश्त नहीं कर सकता है तब इसका यही मतलब है कि वह उस परिस्थिति में अपने को अभियोजित नहीं कर सका है। इसी प्रकार गरम देश में रहने के लिए जीव को वहीं की जलवायु के अनुरूप बनी

बनना पड़ता है। जो जीव अपने को किसी परिस्थिति विशेष के अनुरूप बनाने में असमर्थ होता है वह असाधारण (Abnormal) समझा जाता है। उसका जीवन व्यतीत भी करना कठिन हो जाता है। यहाँ हमें यह याद रखना जरूरी है कि व्यक्ति अपने को वातावरण में अभियोजित करके अपने व्यक्तित्व को नहीं खो देता है। जो जितनी सफलता के साथ परिस्थिति में अपने को अभियोजित कर लेता है उसका व्यक्तित्व भी अधिक विकसित रहता है। मनोविज्ञान में परिस्थिति अभियोजन का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

Q. 22 Discuss why both experience and behaviour are studied in 'sychology. (1950 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ४ और ५ का उत्तर पढ़ें।

CHAPTER 2

NERVOUS SYSTEM.

Q 23 Show how mind is related to body. (1944 A).

मन और शरीर के सम्बन्ध के विषय में प्राचीन काल से विवाद होता आया है। पहले लोगों का ऐसा विचार था कि मन का गुण सोचना (Thinking) और शरीर का गुण प्रसार (Extension) है, ये दोनों गुण एक दूसरे के विरोधी हैं।

अतएव मन और शरीर एक दूसरे के विरोधी हैं और इन दोनों में किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है।

परस्पर क्रियावाद (Interactionism) के अनुसार मन और शरीर एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। परन्तु यह सिद्धान्त भी दोष पूर्ण है। यदि हम इस मत का प्रतिपादन करते हैं तो शक्ति नित्यता-नियम (The law of the conservation of energy) का खण्डन करते हैं, परन्तु यह नियम बिलकुल ठीक है। दूसरी कठिनाई यह उपस्थित हो जाती है कि इस सिद्धान्त को मानने से यह भी स्वीकार करना पड़ता है कि मन और शरीर के गुणों में सादृश्य है, जो वस्तुतः ठीक नहीं है। अतएव यह मत भी मन और शरीर के सम्बन्ध में उचित नहीं है।

समानान्तरवाद के अनुसार मन और शरीर की क्रियाएँ समानान्तर हैं। इसका अभिप्राय यह है कि जहां कहीं भी मानसिक क्रियाएँ आविर्भूत होती हैं वहीं उनके अनुरूप शारीरिक क्रियाएँ भी उत्पन्न हो जाती हैं और शारीरिक क्रियाओं के उत्पन्न होने पर मानसिक क्रियाओं का आविर्भाव हो जाता है। परन्तु विवेचना करने पर यह सिद्धान्त भी खण्डित हो जाता है।

उपर्युक्त तीनों सिद्धान्त अंशतः ठीक हैं, किंतु सच्ची बात तो यह है कि हमारा नित्य प्रति का अनुभव यह व्यक्त करता है कि इन दोनों का सम्बन्ध बहुत ही घनिष्ठ है। संसार की बाहरी चीजें हमें स्वतः प्रभावित नहीं करतीं, बल्कि उनका प्रभाव हमारे मन पर ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा पड़ता है। जब हमारे मन

में किसी प्रकार की इच्छा उत्पन्न होती है तो उस इच्छा की परिपूर्ति स्वतः नहीं होती, बल्कि हमें अपने शारीरिक अवयवों को संचालित करना पड़ता है। जब मस्तिष्क में किसी प्रकार की क्षति हो जाती है या जब हम किसी प्रकार के मादक द्रव्य का सेवन कर लेते हैं तो उसका प्रभाव हमारी मानसिक क्रियाओं पर भी पड़ता है। शारीरिक बीमारियों का भी असर हमारी मानसिक क्रियाओं पर कम नहीं पड़ता। इस प्रकार हम देखते हैं कि शारीरिक क्रियाओं और अवस्थाओं का प्रभाव हमारे मन पर बहुत पड़ता है। शरीर रचना विज्ञान इत्यादि भी मन और शरीर के घनिष्ठ सम्बन्ध का प्रतिपादन करते हैं। इसलिए हम लोगों के अनुसार मानसिक क्रियाओं और अवस्थाओं का प्रभाव हमारे शरीर पर अवश्य पड़ता है, परन्तु शारीरिक क्रियाओं का असर मानसिक क्रियाओं पर पड़ना आवश्यक नहीं है। अतएव हमलोग शरीर और मन के घनिष्ठ सम्बन्ध का प्रतिपादन करते हुए भी इस मत का अनुसरण करते हैं कि शारीरिक क्रियाओं के अनुरूप मानसिक क्रियाओं का होना आवश्यक नहीं है।

Q. 24 Describe some important functions of the central nervous system in the determination of behaviour. (1947 S.)

केन्द्रिय नाड़ीतंत्र (Central nervous system) के दो भाग किए जा सकते हैं, (१) मस्तिष्क (Brain) और (२) सुषुम्ना नाड़ी (Spinal cord)। इनमें से पहले हम सुषुम्ना

नाड़ी का वर्णन करेंगे तत्पश्चात् मस्तिष्क के विभिन्न भागों और उनके कार्यों पर संक्षिप्त रूप में प्रकाश डालेंगे।

सुषुम्ना नाड़ी मेरुदण्ड में है जो गर्दन से लेकर नितम्ब के छोर तक विद्यमान है। यह एक कड़ी तरल रेखा के समान है। इसमें ३१ जोड़ी ज्ञानवाही (Sensory) और क्रियावाही (Motor) तन्तुएँ आकर मिलती हैं। ज्ञानवाही तंतुओं के द्वारा नसस्रोत Nerve impulse) विभिन्न प्रकार की ज्ञानेन्द्रियों से सुषुम्ना नाड़ी में प्रवेश करता है और क्रियावाही तंतुओं के द्वारा नसस्रोत (Nerve impulse) स्नायु (gland) में जाता है। सुषुम्ना नाड़ी को काटने पर हमें इसमें भूरे और सफेद दो प्रकार के पदार्थ मिलते हैं। इसमें बहुत सी नसपेशियाँ (Synapses) भी विद्यमान हैं। यदि हम इसकी क्रियाओं पर विचार करें तो हमें मालूम होगा कि इसके दो मुख्य कार्य हैं, (१) सहज-क्रियाओं का नियंत्रण करना और (२) मस्तिष्क और शरीर के बाहरी अंगों में सम्बन्ध कायम रखना। यह हमारी सभी प्रकार की बाहरी क्रियाओं का नियंत्रण करती है, वे चाहे किसी प्रकार की क्रिया क्यों न हों। अभ्यास-जन्य एवं सहज-क्रियाओं का नियंत्रण इसी से होता है। इसके अतिरिक्त चलने-फिरने, टाइप करने इत्यादि की क्रियाओं में यही काम करती है। इन कामों को संचालित करने के लिए इसे किसी दूसरे भाग की मदद की जरूरत नहीं पड़ती है। कहने का अभिप्राय यह है कि हमारे नित्य प्रति के कार्य और अभ्यास-जन्य कार्य तथा सहज क्रियाओं का नियंत्रण सुषुम्ना से ही होता है।

सुषुम्ना शीर्षक (Medulla oblangata) सुषुम्ना का ऊपरी भाग है जिसके द्वारा सुषुम्ना के नीचे के होने वाले हिस्से की उत्तेजनाएँ मस्तिष्क में और मस्तिष्क में होने वाली उत्तेजनाएँ सुषुम्ना के निम्नस्थ भाग में जाती हैं। सुषुम्ना शीर्षक हमारे जीवन सम्बन्धी क्रियाओं (हृदय संचालन, स्वांसलेना, वमन करना इत्यादि) का नियंत्रण करता है।

अब मस्तिष्क के कामों पर विचार करने के पहले यह व्यक्त कर देना आवश्यक है कि इसके कामों का उल्लेख करने के लिए सरलता के लिए हम इसे तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं, (१) वृहत् मस्तिष्क (Cerebrum), (२) लघुमस्तिष्क (Cerebellum) और सेतु (Pons)।

वृहत् मस्तिष्क मानव मस्तिष्क का सबसे ऊपरी एवं विकसित भाग है जो लगभग एक इंच के आठवाँ भाग के बराबर मोटा होता है। यह दो भागों में विभक्त है (१) दाहिना और (२) बायाँ। इसका दाहिना भाग शरीर की सभी चेतन और अचेतन क्रियाओं का नियंत्रण करता है और बायां भाग शरीर के दाहिने हिस्से की क्रियाओं का वृहत् मस्तिष्क में ही सभी प्रकार की चेतन क्रियाओं का केन्द्र है। एक केन्द्र का सबंन्ध एक ही प्रकार की क्रिया से रहता है और वह भाग उसी का नियंत्रण भी करता है। कहने का अभिप्राय यह है कि शरीर के भिन्न-भिन्न भागों की क्रियाओं और विभिन्न प्रकार के ज्ञान के स्थल इसी वृहत्मस्तिक में पाए जाते हैं। मस्तिष्क के किसी भाग को भी

क्षति से शरीर की क्रियाओं में बाधा पड़ जाती है, और यही अवस्था ज्ञान संबन्धी क्रियाओं की भी होती है। थोड़े शब्दों में यह कहा जा सकता है कि मस्तिष्क में किसी प्रकार की भी क्षति से हम लोगों की सभी प्रकार की क्रियाओं में बाधा पड़ती है। इसी पर हमारी सभी उच्च वर्ग की क्रियाएँ, जैसे, सीखना, ऐच्छिक कार्य और चिंतन इत्यादि निर्भर करती हैं। इसी के बदौलत हम लोग अपने को वातावरण में अभियोजित करने में समर्थ होते हैं।

लघुमस्तिष्क (Cerebellum) वृहत्मस्तिष्क के बीच के भाग में स्थित है और इसमें भी वृहत्मस्तिष्क की तरह दो हिस्से हैं जो नाड़ीतंतुओं से आवद्ध हैं। लघुमस्तिष्क का सम्बन्ध नाड़ी तंतुओं के द्वारा वृहत्मस्तिष्क और सुषुम्ना नाड़ी से है। इसका मुख्य कार्य उत्तेजनाओं से सम्बन्ध स्थापित करना है। शारीरिक क्रियाओं में समता लाना (Balance) इसी भाग का काम है। वृहत्मस्तिष्क तथा यह मिलकर काम करते हैं। फुटबॉल इत्यादि खेलने में ये दोनों साथ-साथ काम करते हैं। दौड़ना, चलना और सायकिल चलाने इत्यादि के कार्य लघुमस्तिष्क के ही द्वारा नियंत्रित होते हैं। प्रयोग करके देखा गया है कि लघुमस्तिष्क को निकाल देने पर जीव की क्रियाएँ पूर्णतः असाधारण हो जाती हैं।

सेतु (Pons) की आकृति मेहराब के प्रकार की होती है और यह लघुमस्तिष्क के दोनों भागों को मिलाता है। यह भी

शरीर की साधारण क्रियाओं में सहायक होता है। कहने का आशय यह है कि हमारे सभी व्यवहार एवं क्रियाएँ, चेतन अथवा अचेतन, विचारयुक्त या विचारविहीन, ऐच्छिक या अनैच्छिक केन्द्रिय नाड़ीतंत्र के ही द्वारा नियंत्रित होती हैं।

Q. 25--Briefly describe the structure and the general functions of the central nervous system. (1947 S.)

इस प्रश्न के लिए प्रश्न नम्बर १८, १६४६ S. देखें।

Q. 26 Write a short note on the general functions of the central nervous system (1950 S)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर २५ का उत्तर देखें।

CHAPTER 3.

ANALYSIS AND DIFFERENT PHASES OF MENTAL LIFE

Q. 27 What are the different phases of mental life? Give some important proofs for the existence of the unconscious.

आज के कुछ दिन पूर्व लोगों का यह दृष्टिकोण था कि मन केवल चेतन (Conscious) ही है, परन्तु अब प्रयोग करके यह सिद्ध कर दिया गया है कि मन की सिर्फ एक ही अवस्था नहीं, बल्कि इसकी तीन अवस्थाएँ हैं, (१) चेतन (Conscious), (२) अर्द्ध चेतन (Subconscious) और (३) अचेतन (Unconscious)।

अब हम अचेतन मन की सत्ता के पक्ष में निम्नाङ्कित प्रमाण देंगे।

(१) आधुनिक युग में कई व्याधियाँ मनोवैज्ञानिकों के द्वारा अचेतन मन के आधार पर अच्छी की जा रही हैं। यदि अचेतन मन न होता तो इस प्रकार की चिकित्सा से लोगों को सफलता नहीं मिलती।

(२) बेहोशी की हालत में हमलोग बहुत सी बातें ऐसी बक देते हैं, जिन्हें होश में आने पर स्वीकार नहीं करते। इससे यह बात स्पष्ट है कि बेहोशी की हालत मे हम लोग जो कुछ बातें बकते है वे हमारे अचेतन मन में ही पड़ी रहती हैं।

(३) किसी व्यक्ति को सम्मोहित करके जो कुछ आदेश दिया जाता है वह सम्मोहनोत्तर उस आदेश का प्रतिपालन करता है। परन्तु उसे उस आदेश की चेतना नहीं रहती है। यह व्यापार यह प्रमाणित करता है कि सम्मोहित अवस्था का आदेश विषयी (Subject) के अचेतन मन मे रहता है जिसकी वजह से वह उचित समय पर आदेश का पालन करता है।

(४) हमलोग ऐसे-ऐसे स्वप्नों को देखते हैं जो पूर्णतः निरर्थक मालूम होते हैं, परन्तु विश्लेषण (Analysis) करने पर यह ज्ञात होता है कि हमारी दबी (Repressed) हुई इच्छाएँ ही वेश बदलकर अपनी संतृप्ति करती हैं और दबी हुई इच्छाएँ भी हमारी चेतना में नहीं रहतीं, इसलिए अवश्य ही अचेतन मन में रहती हैं।

(५) हमलोग नित्यप्रति ऐसे व्यापारों का प्रदर्शन करते हैं जिनकी सार्थकता साधारण तरह से नहीं जानी जाती है। उदाहरण के लिए, व्यक्ति या स्थान विशेष का नाम भूलना, बोलने और लिखने मे अशुद्धियाँ या मूँछ और दाढ़ी पर हाथ फेरना इत्यादि कार्य सभी अचेतन मन की सत्ता को प्रतिपादित करते हैं।

(६) हमलोग कभी-कभी किसी समस्या को हल करना चाहते हैं, लेकिन लाख कोशिश करने पर भी उसका हल नहीं होता है। परन्तु जब सवेरे सोकर उठते हैं तो समस्या को भी हल पाते हैं। सोने के समय चेतन मन तो काम करता नहीं, इसलिए यह कार्य अचेतन मन के ही द्वारा सम्पादित होता है।

(७) इसके अतिरिक्त पौराणिक कथाओं तथा बहुत सी मूर्तियो की व्याख्या भी हम अचेतन मन को मानकर कर सकते हैं। अचेतन मन के पक्ष में और भी प्रमाण हैं, जिनके उल्लेख की यहाँ कोई आवश्यकता नहीं है।

Q. 28 Distinguish between cognition, affection and conation. Are they separate and independent kinds of mental processes. ? (1914 S)

हमारे चेतन मन (Conscious mind) मे तीन प्रधान क्रियाएँ होती हैं, (१) चिंतन, (२) भाव और (३) इच्छा। अगर हम इन क्रियाओ के आधार पर अपने चेतन मन का विभाजन करें तो हमे ज्ञात होगा कि हमारी चेतना की तीन

अवस्थाएँ होती हैं जिन्हें क्रमशः प्रज्ञात्मक (Cognitive), भावात्मक (Affective) और क्रियात्मक या इच्छात्मक (Conative) अवस्थाएँ कहते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारी चेतना के ये ही तीन मुख्य प्रकार हैं। उदाहरण से यह और भी अच्छी तरह समझ में आ जाएगा। हम एक फूल को देखते हैं और जानते हैं कि यह सुन्दर एवं सुगन्धित है। फूल के विषय में जानने की इस अवस्था को प्रज्ञात्मक अवस्था कहते हैं। फिर फूल की सुगन्धि और सुन्दरता से हमारे मन में खुशी होती है, खुशी होने की इस अवस्था को भावात्मक अवस्था कहते हैं। भावात्मक अवस्था में प्रज्ञान का पदार्थ हमें किसी प्रकार प्रभावित करता है। प्रभावित होने पर हम उस पदार्थ को अपनाना चाहते हैं या उससे छुटकारा पाना चाहते हैं। जब हम फूल को देखते हैं और वह हमें अच्छा मालूम होता है तो हम उसे बहुत सावधानी से ध्यान पूर्वक देखने लगते हैं या तोड़ने की अभिलाषा करते हैं। यह हमारे चेतन मन की इच्छात्मक अवस्था है। इस प्रकार प्रज्ञान (Cognition), भाव (Affection) और इच्छा (Conation) हमारे चेतन मन की विभिन्न तीन अवस्थाएँ हैं जिन्हें हम एक नहीं कह सकते। इन तीनों चेतना प्रकार के अन्तरों को व्यक्त करने के लिए यह भी स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि प्रज्ञात्मक अवस्था में हम अपने या किसी दूसरे पदार्थ के विषय में कुछ जानते हैं जिससे हमारे ज्ञान की वृद्धि होती है। संवेदना

(Sensation), प्रत्यक्ष, (Perception), स्मृति (Memory) और चिंतन (Thinking) इत्यादि प्रज्ञात्मक अवस्थाएँ हैं। भावात्मक अवस्था में हमें कोई पदार्थ या अवस्था (Condition) प्रभावित करती है जिससे हमें सुख या दुःख का अनुभव होता है। इच्छात्मक अवस्था में हमें किसी क्रिया को करने की इच्छा होती है। ध्यान (Attention) ऐच्छिक क्रिया (Voluntary action) और मूल प्रवृत्तियाँ इत्यादि इच्छात्मक अवस्थाएँ हैं। यों तो प्रायः पहले किसी चीज का ज्ञान होता है, उसके बाद भाव उत्पन्न होता है और तब किसी क्रिया की इच्छा उत्पन्न होती है, परन्तु कभी-कभी इच्छा से भी भाव की उत्पत्ति होती है। जब किसी प्रकार की इच्छा की पूर्ति हो जाती है तो सुखद भाव उत्पन्न होता है और यदि उसकी परिपूर्ति नहीं होती है तो दुःखद भाव उत्पन्न हो जाता है।

ये तीनों मानसिक क्रियाएँ एक दूसरे से भिन्न अवश्य हैं, किन्तु एक दूसरे से स्वतंत्र (Independent) और अलग (Separate) नहीं हैं। प्रायः तीनों क्रियाएँ इस प्रकार से जटित (Involved) रहती हैं कि उनको अलग-अलग करना असंभव हो जाता है। हम जब किसी चीज को देखते हैं तो जानने की क्रिया होती है और उस जानकारी से भाव-क्रिया को उत्पत्ति होती है और वह भाव, इच्छा को उत्पन्न करता है। इस प्रकार प्रज्ञान के समय भाव और इच्छा की क्रियाएँ विद्यमान रहती हैं। हाँ, इतना अवश्य होता है कि इन तीनों में से

किसी एक ही क्रिया की प्रधानता रहती है। जब हम घातक जानवर को देखते हैं तो भय का संवेग (Emotion) होता है और उससे बचने के लिए भागने की इच्छा होती है। यहाँ यद्यपि भाव या संवेग की ही प्रधानता है, लेकिन साथ-साथ प्रज्ञान और इच्छा भी विद्यमान हैं। इसी प्रकार जब इच्छा की प्रधानता रहती है तो ज्ञान और भाव अप्रधान रहते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि ये तीनों क्रियाएँ साथ-साथ रहती हैं जिनको हम एक दूसरे से अलग नहीं कर सकते। हाँ, इन तीनों में से किसी समय विशेष में एक की ही प्रधानता रहती है।

यहाँ यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि यद्यपि ये तीनों क्रियाएँ साथ-साथ होती हैं, परन्तु कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक इस प्रकार से प्रधान हो जाती है कि दूसरी दो क्रियाएँ स्वतः विलीन हो जाती हैं, किन्तु ऐसा जीवन में बहुत ही कम होता है।

CHAPTER 4

SENSATION

Q. 29 State and illustrate the attributes of sensations. (1914 A)

संवेदनाओं के गुणों या विशेषताओं (Attributes) का वर्णन करने के पहले यह व्यक्त कर देना आवश्यक है कि संवेदना किसी उत्तेजना (Stimulus) के द्वारा समुत्पन्न सरलतम (Simplest) संस्कार (Impression) है। यही हमारे ज्ञान

का सर्व प्रथम सोपान है। इसके द्वारा हमें किसी उत्तेजना के गुण की चेतना मात्र ही होती है, उस उत्तेजना का ज्ञान नहीं।

अब इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक है कि संवेदना का गुण वह है जो सभी प्रकार की संवेदनाओं में पाया जाता है। इस प्रकार से संवेदनाओं में निम्नाङ्कित विशेषताएँ होती हैं: (१) गुण (Quality), (२) मात्रा Intensity), (३) घनत्व वा प्रसारण (Extensity), (४) सत्ताकाल (Duration), (५) स्थानीय चिह्न (Local-sign) और स्पष्टता (Clearness), हम यहाँ इन विशेषताओं का वर्णन सोदाहरण क्रमशः करेंगे।

गुण दो संवेदनाएँ एक दूसरे से भिन्न होती हैं और उनमें यह भिन्नता उनके गुण की भिन्नता के कारण होती है। रूप संवेदना (Visual sensation) शब्द संवेदना (Auditory sensation) से भिन्न होती है। इसी प्रकार घ्राण संवेदना (Olfactory sensation) स्पर्श संवेदना या अन्य संवेदनाओं से भिन्न होती है। दो प्रकार की ज्ञानेन्द्रियों (Sense organs) से उत्पन्न संवेदनाओं के गुणों में जातीय (Generic) भेद होता है। जैसे, घ्राण संवेदना और ध्वनि संवेदना। परन्तु जब एक ही ज्ञानेन्द्रिय से उत्पन्न संवेदनाओं के गुणों में भेद होता है तो वह उपजातीय (Specific) भेद होता है। पीले रंग की संवेदना और नीले रंग की संवेदना में उपजातीय भेद है। इस प्रकार हम देखते हैं कि गुण सभी संवेदनाओं में पाया जाता है।

मात्रा संवेदना में मात्रा की भी विशेषता पाई जाती है। समान गुणों की संवेदनाएँ मात्रा (Intensity) में एक दूसरे से भिन्न होती हैं। शब्द की संवेदना या तो उच्चतम होती है या मन्दतम होती है। इसी प्रकार प्रकाश प्रखरतम या मन्दतम होता है। कोई रंग बहुत हरा होता है और कोई बहुत ही फीका। संवेदनाओं मे यह भेद मात्रा भेद के कारण होता है।

घनत्व या प्रसारणा भी संवेदना का एक विशेष गुण है। जब हम एक टिमटिमाते हुए दीपक को देखते हैं और फिर सूर्य की ओर देखते हैं तो इन दोनों संवेदनाओं के घनत्व या प्रसारणा में अन्तर होता है। एक छोटी चवन्नी के स्पर्श और एक रुपए के स्पर्श की संवेदनाओं में प्रसारण भेद होता है। कुछ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार यह विशेषता स्पर्श और दृष्टि संवेदनाओं में ही पाई जाती है, परन्तु कुछ लोगों के अनुसार यह गुण सभी प्रकार की संवेदनाओं में होता है।

सत्ताकाल की विशेषता सभी संवेदनाओं में पाई जाती है। जब पाँच सेकण्ड तक कोई गाना होता है और कोई दो मिनट तक होता है तो इन दोनों के सत्ताकाल मे भिन्नता होती है। इसी प्रकार सभी संवेदनाएँ देर तक होती रहती हैं या थोड़ी देर तक होती हैं।

स्थानीय चिह्न की विशेपता सभी संवेदनाओं मे होती है क्योंकि सभी प्रकार की संवेदनाओं के लिए विशेष ज्ञानेन्द्रिय और विशेष स्थान निश्चित रहता है। हमें उष्ण और शीत

संवेदनाओं का अनुभव या शरीर के किसी स्थान पर दो विन्दुओं का स्पष्टीकरण इसी विशेषता के कारण होता है। इस गुण की स्पर्श संवेदना में विशेष महत्ता है।

इसी प्रकार स्पष्टता भी संवेदना की एक विशेषता है। कोई संवेदना स्पष्ट होती है और कोई अस्पष्ट। ये ही उपर्युक्त संवेदनाओं के गुण हैं, किन्तु कुछ मनोवैज्ञानिक भावना विशिष्ट-लक्षण (Feeling tone) को भी संवेदना का एक गुण मानते हैं, किंतु उनका यह सिद्धान्त अमान्य है।

Q 30 Describe briefly the structure and function of the eye (1944 S.)

आंख की उपमा लोग गोल कैमरे से देते हैं जिसकी रक्षा पलक और बरौनी से होती है। आँख पूर्णतः गोल नहीं है, बल्कि कुछ लम्बीकार होती है जिसकी लम्बाई एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक प्रायः एक इंच होती है। नेत्र गोलक (Eye-ball) का अगला भाग कुछ उभरा हुआ रहता है जिसे कनीनिका (Cornea) कहते हैं। कनीनिका से होकर प्रकाश जिस स्थान पर पहुँचता है उसे उपतारा (Iris) कहते हैं। आख गोलक में तीन तह होते हैं, (१) श्वेतस्तर (Sclerotic), (२) मध्य पटल (Choroid) और (३) अक्षिपट (Retina)।

श्वेतस्तर आँख के गोलक का सबसे ऊपरी भाग है और इसका प्रसार आंख के अधिकांश भाग पर है। यह पारदर्शी नहीं होता, अर्थात् इसके आरपार कोई चीज नहीं दीख पड़ती है।

इसी का अगला भाग कनीनिका कहलाता है जो भूरा या काला जान पड़ता है। यह पारदर्शी होता है।

मध्यपटल (Choroid) काले रंग का होता है और इसके सामने की ओर प्रकाश ग्रहण करने वाला उपतारा (Iris) होता है। यह कनीनिका के पीछे होता है और उससे दीख पड़ता है। उपतारे के बीच में एक गोल छेद होता है जिसे पुतली (Pupil) कहते हैं। जब हम प्रकाश में जाते हैं तो उपतारे में लगी हुई माँस पेशियां हमारी पुतली को छोटा कर देती हैं और जब हम अन्धेरे में जाते हैं तो हमारी पुतली बड़ी हो जाती है। इस घटने बढ़ने का ज्ञान हमको नहीं होता है। उपतारे का मुख्य काम आँख के सामने आने वाले प्रकाश को घटाना या बढ़ाना है। जब किसी पदार्थ से प्रकाश आँख में आता है तो उसे उपतारा, रेटिना के एक विशेष भाग में केन्द्रित करता है। उपतारे के पीछे लेन्स होता है और इसका भी वही काम है जो कैमरे के लेन्स का होता है। मध्यपटल के कारण आँख की कोठरी अन्धकारमय बनी रहती है।

आँख के गोलक का सबसे भीतरी भाग रेटिना या अक्षिपट कहलाता है। यह भाग बहुत ही महत्ता का है जो मध्य पटल के नीचे होता है। इसके बीचोबीच में पीत बिन्दु (Fovea) होता है जिसके उत्तेजित होने पर दृष्टि संवेदना होती है। जिस स्थान से होकर दृष्टिसंवेदना की नाड़ियाँ मस्तिष्क में पहुँचती हैं उस स्थान को अन्धबिन्दु (Blind spot) कहते हैं, जहाँ कोई

चीज दीख नहीं पड़ती है। अक्षिपट या रेटिना डण्डों (Rods) और सूचियों (Cones) से बना हुआ है। डण्ड लम्बाकार और पतले होते हैं और सूचियाँ मोटे तथा त्रिकोणाकार होती हैं। डण्डों के द्वारा प्रकाश, काले, भूरे और उजले का ज्ञान होता है और सूचियों से सभी रंगों का ज्ञान होता है। रेटिना में जहाँ सूचियों का अभाव रहता है वहाँ रंगो का ज्ञान नहीं होता। यही कारण है कि रेटिना के छोर पर किसी रंग का ज्ञान नहीं होता।

कहने का अभिप्राय यह है कि आँख के लिए उपयुक्त उत्तेजना प्रकाश तरंग ही है। जब किसी उत्तेजना का प्रकाश हमारी आँखों पर पड़ता है तो उसको परिग्रहण करने के लिए हमारी आँख पूर्णतः तैयार हो जाती है। प्रकाश का परिग्रहण हमारी आँख की रेटिना द्वारा होता है और पुनः उस प्रकाश को दृष्टिसंवेदना की नाड़ियों द्वारा मस्तिष्क में भेजा जाता है और तब हमें प्रकाश और रंग की संवेदना होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारी आँख के भिन्न भिन्न भागों की बनावट और कार्य भिन्न भिन्न हैं, परन्तु रेटिना का हाथ दृष्टि संवेदना में विशेष रूप से रहता है। वस्तुतः यह हमारी आँख का बहुत ही आवश्यक एवं प्रमुख भाग है।

Q. 31—Briefly describe the structure of the eye, and point out the stimulus involved in visual sensation. (1945 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर २३, सन् १६४४ S का उत्तर देखें।

Q. 32- Give a short description of the structure and functions of the visual or the auditory sense organs. (1946 A.)

दृष्टि संवेदना की ज्ञानेन्द्रिय की बनावट और उसके कार्य के लिए प्रश्न नम्बर २३ सन् १६४४ S. देखें।

ध्वनि संवेदना के लिए इन्द्रिय, कान है। कान की रचना और कार्य का वर्णन करने के लिए यह व्यक्त कर देना आवश्यक है कि कर्मेन्द्रिय की रचना बहुत ही विषम है, अतएव इसका पूर्णतः वर्णन करना असंभव है। यहाँ हम लोग अपना काम चलाने के लिए इसके मुख्य भागो की रचनाओ और कार्यों का वर्णन करेंगे।

कान के निम्नाङ्कित तीन भाग हैं (१) बाहरी कान(External ear), (२) मध्यकान (Middle ear) और (३) आन्तरिक कान (Internal ear.)

बाहरी कान दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। पहला भाग वह है जिसका आकार सीप की तरह है। इसका निचला भाग तो नहीं, परन्तु शेष सभी भाग कारटिलेज का बना हुआ है। दूसरे भाग को कान की नली कहते है जो करीब-करीब सवा इंच की होती है। इस नली का सम्बन्ध कान के ढोल (Ear-drum) से रहता है। ढोल की स्थिति बाहरी कान और मध्य कान के बीच होती है। बाहरी कान केवल ध्वनि को ग्रहण करता है। इसकी विशेष उपयोगिता मनुष्यों में तो नहीं है; परन्तु अन्य जानवरों में अधिक है।

मध्यकान एक कोठरी के समान है जो बाहर की ओर प्रशस्त और भीतर की ओर संकीर्ण होता है। इसकी स्थिति कनपटी की हड्डियों के बीच होती है। कण्ठ-कर्ण नली (Eustachian tube) इससे होकर गले तक जाती है। इसमें एक पतली नली बराबर हवा से भरी रहती है। मध्यकान में तीन छोटी-छोटी हड्डियाँ होती हैं जो आपस में बंधी हुई हैं। इन हड्डियों का सम्बन्ध ढोल और मध्यकान की भीतरी दीवाल से होता है। जो हड्डी ढोल के पास होती है उसे मुद्गर (Hammer); बीच की हड्डी को निहाई (Anvil) और भीतरी कान के समीप वाली हड्डी को रकाव (Stirrup) कहते हैं। जब आकाश प्रकंप (Ether vibration) ढोल को प्रकम्पित करता है तो ये हड्डियाँ भी हिलने लगती हैं। इस प्रकार मध्यकान का काम आकाश प्रकंप से अन्तःकर्ण को प्रकम्पित करना या ध्वनि को भीतरी भाग में भेजना है।

भीतरी कान, कनपटी की हड्डी के भीतर स्थित रहता है। इस कान की दीवाल एक पतली झिल्ली से ढकी रहती है जिसमें बराबर एक तरल पदार्थ भरा रहता है। इसी झिल्ली की जड़ में ध्वनि संवेदना की नाड़ियों के छोर भी होते है। जब किसी शब्द की लहरें कान तक पहुँचती हैं तो ढोल मे स्पन्दन पैदा हो जाता है। यही स्पन्दन निहाई और रकाब से होकर भीतरी कान में पहुँचता है। जब स्पन्दन भीतरी कान में पहुँचता है तो झिल्ली में स्थित छोटी-छोटी केश-पेशी (Hair cells)

प्रकम्पित हो जाती हैं और यह प्रकम्पन ध्वनिनाड़ियों के द्वारा मस्तिष्क में ध्वनिज्ञान के अंचल में पहुँच कर ध्वनि संवेदना में परिवर्तित हो जाता है। अर्द्धचन्द्राकार नालियाँ (Semicircular canals) भीतरी कान से आबद्ध रहती हैं जिनके अधिक उत्तेजित होने पर चक्कर आने का अनुभव होता है। ये सुनने के काम में तो नहीं आतीं, लेकिन इनकी उपयोगिता शारीरिक हलचल और उसकी समता में अत्यधिक है। यहाँ इसे ध्यान में रखना आवश्यक है कि कान के लिए आकाश प्रकम्पन (Ether vibration) ही उत्तेजना है। यही प्रकम्पन ढोल को हिलाकर और भीतरी कान के तरल पदार्थ को प्रकम्पित कर ध्वनि संवेदना उत्पन्न करता है। आकाश प्रकम्पन सभी ध्वनियों में होता है।

Q. 33 Describe with the help of Examples the various attributes of sensation. Define attributes of Pitch and timbre of auditory sensation. (1947 A).

इस प्रश्न के पहले भाग के लिए प्रश्न नम्बर २२, १९४४ A. का उत्तर देखें।

ध्यान पूर्वक विचार करने पर हमें ज्ञात होगा कि प्रत्येक श्रवणसंवेदना में स्वरमान या उच्चत्व (Pitch) होता है। हम प्रायः रोज ही ऐसे वाक्यों का प्रयोग करते हैं जो ध्वनि-उच्चत्व और नीचत्व को व्यक्त करते हैं। जब हम किसी व्यक्ति के

सम्बन्ध में यह कहते हैं कि अमुक व्यक्ति की आवाज बहुत ऊँची है तो हम ध्वनि के उच्चत्व (Pitch) गुण को ही व्यक्त करते हैं। ध्वनि का यह गुण आकाश प्रकम्प के गतिचक्र (Frequency) पर निर्भर करता है। यदि गति-चक्र प्रति सेकण्ड अधिक होता है तो आवाज ऊँची होती है और यदि गतिचक्र न्यून होता है तो आवाज नीची मालूम होती है।

ध्वनि या शब्द में नाद (Timbre) गुण भी होता है। नाद कई प्रकार के धातु मिश्रित ध्वनि को कहते हैं। यदि हम एक ही ताल और लय में कई बाजों को एक साथ बजाते हैं तो सबकी ध्वनि अलग-अलग सुनाई पड़ती है। पर भिन्नता नाद के ही कारण होती है, क्योंकि प्रत्येक की प्रतिध्वनि का नियम अलग-अलग होता है। इन गुणों के अतिरिक्त ध्वनि के और गुण भी होते हैं जिनके वर्णन की यहाँ कोई जरूरत नहीं है।

Q. 34--Describe the characteristics of visual or auditory sensation. (1948 S.)

दृष्टिसंवेदना (visual sensation) या ध्वनिसंवेदना (Auditory sensation) को विशिष्ठ संवेदना (special sensation) कहते हैं। इसलिए इन दोनों में से किसी की विशेषता को व्यक्त करने के लिए यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि विशिष्ठ संवेदना की विशेषता को वर्णन कर देने से ही ध्वनि संवेदना या दृष्टि संवेदनाओं की विशेषताओं का वर्णन हो जाएगा।

"दृष्टि संवेदना या ध्वनि संवेदना की पहली विशेषता यह है कि इस प्रकार की संवेदना के लिए विशेष प्रकार की इन्द्रिय की आवश्यकता पड़ती है। ध्वनि संवेदना के लिए कर्णेन्द्रिय और दृष्टि संवेदना के लिए नेत्र आवश्यक हैं। हम इनमें से किसी भी संवेदना को किसी दूसरी इन्द्रिय के द्वारा नहीं उत्पन्न कर सकते हैं। न दृष्टि संवेदना कान से उत्पन्न हो सकती है और न ध्वनि संवेदना आँख से।

दूसरी विशेषता इन मे से किसी भी संवेदना की यह है कि इस प्रकार की संवेदना के लिए खास तरह की बाहरी उत्तेजना की जरुरत पड़ती है। कहने का मतलब यह है कि ध्वनि संवेदना के लिए आकाश लहरी (Ether vibration) ही उत्तेजना हो सकती है, दूसरी उत्तेजना से ध्वनि संवेदना नहीं उत्पन्न हो सकती है। इसी प्रकार दृष्टि संवेदना के लिए प्रकाश तरंग (Light waves) ही उत्तेजना हो सकती है।

इन संवेदनाओं की तीसरी विशेषता यह है कि ये संवेदनाएँ एक दूसरे से सरलता के साथ भिन्न की जा सकती हैं। हम ध्वनि संवेदना को दृष्टि संवेदना और रस सवेदना इत्यादि से बहुत आसानी के साथ अलग कर देते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि विभिन्न दृष्टि संवेदनाओं या ध्वनि संवेदनाओं को भी हम लोग उनके विशेष गुणों के कारण अलग करने में समर्थ होते हैं।

दृष्टि संवेदना या ध्वनि संवेदना की चौथी विशेषता यह है कि हम इसको शरीर के किसी निश्चित भाग या वाह्य विश्व के

किसी निश्चित भाग में स्थानीकरण करने में समर्थ होते हैं। दृष्टि संवेदना आँख के द्वारा और किसी बाहरी उत्तेजना के कारण होती है। हम उत्तेजना को भी एक निश्चित स्थान देते हैं और संवेदना को भी। इसी प्रकार ध्वनि संवेदना के लिये कान और बाहर से आनेवाली आवाज को हम निश्चित स्थान देते हैं।

पाँचवी विशेषता ध्वनि संवेदना या दृष्टि संवेदना की यह है कि इस प्रकार की संवेदना से हमारे ज्ञान की वृद्धि होती है, क्योंकि इन दोनों में से किसी भी संवेदना से हमें किसी उत्तेजना के गुण के विषय में मालूम होता है। वस्तुतः दृष्टि संवेदना और ध्वनि संवेदनाएं हमारे ज्ञान को बढ़ाने में बहुत ही सहायक होती हैं।

ध्वनि संवेदना या दृष्टि संवेदना की छठी विशेषता यह है कि इस संवेदना मे कई प्रकार होते हैं, अर्थात् ये संवेदनाएँ अंश और मात्रा में भी भिन्न रहती हैं। ध्वनि संवेदना कभी स्वरमय तो कभी हल्लामय होती है। कभी तेज तो कभी फीकी होती है। इसी प्रकार दृष्टि संवेदना कभी अधिक देर तक होती है तो कभी कम देर तक। कोई विशेष तीव्र होती है तो कोई कम तीव्र। इस प्रकार हम देखते हैं कि ये संवेदनाएँ अंश (Degree) और प्रकार में बराबर एक दूसरे से भिन्न होती हैं। ये ही उपर्युक्त विशेषताएँ ध्वनि संवेदना या दृष्टि संवेदना की हैं।

Q 35 Distinguish between the sensation of hunger and sensation of colour. Describe the attributes of sensation.

भूख की संवेदना (Sensation of hunger) को अन्तरावयव (organic sensation) और रंग की संवेदना को विशिष्ट संवेदना (Special sensation) कहते हैं, इसलिए हम यहाँ अन्तरावयव-संवेदना और विशिष्ट संवेदना के अन्तरों को व्यक्त करते हुए इन दोनों प्रकार की संवेदनाओं का उदाहरण देंगे।

अब इन दोनों के अन्तरों को व्यक्त करने के लिए यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि अंतरावयव (भूख की संवेदना) संवेदना के लिए विशेष प्रकार की इन्द्रिय की आवश्यकता नहीं पड़ती। परन्तु दृष्टि संवेदना या विशिष्ट संवेदना के लिए विशेष प्रकार की इन्द्रिय (आँख) की जरूरत पड़ती है, भूख की संवेदना के लिए किसी बाहरी उत्तेजना की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि इसकी उत्पत्ति आन्तरिक अवस्थाओं के परिवर्तन के कारण होती है, लेकिन दृष्टि संवेदना या रंग की संवेदना के लिए बाहरी उत्तेजना आवश्यक है। भूख की संवेदना (अन्तरावयव संवेदना) से हमें बाह्य विश्व का ज्ञान नहीं होता, बल्कि हमारी शारीरिक अवस्था को व्यक्त करती है, लेकिन रंग की संवेदना हमें बाहरी संसार के विषय में ज्ञान देती है। जिस प्रकार हम रंग की संवेदना को अन्य प्रकार की संवेदनाओं या अन्य रंगों की संवेदनाओं से अलग कर सकते हैं उस प्रकार भूख की संवेदना को अन्य अन्तरावयव संवेदनाओं से अलग नहीं कर सकते हैं। गत की भूख की संवेदना (अन्तरावयव संवेदना) को स्मरण करना कठिन होता है, लेकिन रंग की संवेदना को स्मरण करना आसान है। हम भूख की संवेदना

(अ-परावयव संवेदना) को शरीर के किसी एक भाग में निश्चित स्थान नहीं दे सकते, लेकिन रंग संवेदना के लिए शरीर के अन्दर एक निश्चित स्थान दे सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि भूख की संवेदना और रंग की संवेदना में कई अन्तर हैं।

प्रश्न के दूसरे भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर २२, सन् १९४४ A का उत्तर देखें।

Q. 36 What is sensation? Explain and illustrate its different attributes.

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर २२, १९४४ A का उत्तर देखें।

Q. 37 What is the feelnig tone of Sensations? Distinguish between a pain sensation and the feelnig of unpleasantness. (1949 A.)

Feelnig tone of Sensations की व्याख्या करते समय यह ध्यान में रखना जरूरी है कि प्रत्येक संवेदना (Sensation) के दो पहलू होते हैं भावात्मक (Affective) और ज्ञानात्मक (Cognitive)। किसी संवेदना में भावात्मक शक्ति अधिक रहती है और किसी में ज्ञानात्मक शक्ति। जब किसी संवेदना में ज्ञानात्मक शक्ति अधिक रहती है तो उसमें भावात्मकता कम रहती है और जब भावात्मकता अधिक रहती है तब ज्ञानात्मकता कम रहती है। मनोवैज्ञानिकों ने संवेदना की इसी भावात्मक

शक्ति को मनोवैज्ञानिक भाषा में संवेदना की भावात्मकता (Feelnig tone of sensations) कहा है। जब हमारी किसी ज्ञानेन्द्रिय को कोई उत्तेजना प्रभावित करती है तब हम उसके प्रभाव के कारण सुख या दुःख का अनुभव करते हैं। जब हमें भूख की संवेदना होती है तब हमें बेचैनी मालूम होती है और जब गेंदा के फूल की संवेदना होती है तब हमें आनन्द मालूम होता है। यही बेचैनी या आनन्द का भाव संवेदना की भावात्मिकता या Feelnig tone of sensations है।

अब पीड़ा की संवेदना (Sensation of pain) और दुःखद भाव के अन्तरों को व्यक्त करने के लिये यह याद रखना जरूरी है कि पीड़ा की संवेदना से शरीर का एक भाग प्रभावित होता है, किन्तु दुःखके भाव से हमारा सारा शरीर प्रभावित होता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि पीड़ा की संवेदना को हम शरीर के एक भाग में निश्चित कर सकते हैं, लेकिन दुःखद भाव को एक स्थान पर प्रस्थापित नहीं कर सकते।

पीड़ा की संवेदना किसी उत्तेजना विशेष के गुण को व्यक्त करती है, किंतु दुःखद भाव हमारी मानसिक अवस्था को व्यक्त करता है। अतः पीड़ा की संवेदना विधेयात्मक (Objective) है, लेकिन दुःखद भाव आत्मगत (Subjective) है।

पीड़ा की संवेदना के लिये एक इन्द्रिय विशेष की आवश्यकता पड़ती है, लेकिन दुःखद भाव के लिये किसी इन्द्रिय (Sense organ) विशेष की जरूरत नहीं पड़ती।

हम पीड़ा की संवेदना के साथ अन्य प्रकार की भी संवेदनाओं का अनुभव कर सकते हैं लेकिन दुःखद भाव के रहते हुए सुखद भाव को अनुभव कदापि नहीं कर सकते।

हम पीड़ा की संवेदना का पुनरावर्तन कर सकते हैं किंतु दुःखद भाव का पुनरावर्तन असंभव है।

पीड़ा की संवेदना पर ध्यान लगाने से वह और भी प्रबल हो सकती है, किंतु दुःखद भाव पर ध्यान लगाने से वह विलीन हो सकता है।

Q. 38 Describe the general structure of the eye and give the attributes of visual sensations. (1949 S.)

इसके उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ३१ और ३४ का उत्तर देखें।

Q. 39 Describe briefly the structure of the eye. Indicate how a visual sensation arises. (1950 A)

इसके उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ३० और ३१ का उत्तर देखें।

CHAPTER 5.

PERCEPTION.

Q. 40 Point out the distinction between sensation and perception. Analyse the process involved in perceiving a mango. (1945 A.)

संवेदना (Sensation) एक सरल (Simple) क्रिया है, लेकिन प्रत्यक्ष (Perception) एक जटिल मानसिक क्रिया

(Complex mental process) है। इसका मतलब यह है कि संवेदना में एक ही प्रकार की क्रिया होती है, लेकिन प्रत्यक्ष में कई क्रियाएँ सम्मिलित रहती है।

संवेदना उपस्थितिकारी (Presentative) प्रक्रिया है, क्योंकि इसमें हमारी ज्ञानेन्द्रिय के सामने कोई उत्तेजना मौजूद रहती है जिसकी हमें संवेदना होती है, परन्तु प्रत्यक्ष उपस्थितिकारी प्रतिरूपक प्रक्रिया है। प्रत्यक्ष में संवेदना की ही व्याख्या की जाती है और व्याख्या के समय स्मृति के द्वारा उत्तेजना के अन्य गुणों को वर्त्तमान संवेदना के साथ जोड़ देते हैं। इसीलिए इसे उपस्थितिकारी प्रतिरूपक प्रक्रिया कहते है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि संवेदना में स्मृति नहीं रहती, लेकिन प्रत्यक्ष में स्मृति भी विद्यमान रहती है।

संवेदना एक विमूर्तन या प्रत्याहार है, क्योंकि वस्तुतः विशुद्ध संवेदना प्रौढ़ व्यक्तियों में असंभव है, परन्तु प्रत्यक्ष हमारा मूर्तमान अनुभव है।

संवेदना में हमें किसी उत्तेजना के गुण की चेतना मात्र होती है उस उत्तेजना का नहीं, लेकिन प्रत्यक्ष में हमें उस उत्तेजना का ज्ञान होता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि संवेदना में हमें किसी उत्तेजना के गुण का परिचय मात्र मिलता है, परन्तु प्रत्यक्ष में हमें उसकी पूर्ण जानकारी हो जाती है।

प्रत्यक्ष में कई प्रकार की मानसिक क्रियाएँ सम्मिलित रहती हैं, लेकिन संवेदना में एक ही प्रकार की मानसिक क्रिया होती है,

इसलिये प्रत्यक्ष में मन संवेदना की अपेक्षा विशेष सक्रिय (Active) रहता है।

संवेदना की क्रिया हमारे मन में पहले होती है, लेकिन प्रत्यक्ष की क्रिया उसके बाद होती है। इसके अलावे संवेदना का प्रभाव हमारे मन पर सीमित होता है, किन्तु प्रत्यक्ष का प्रभाव हमारे मन पर विशेष पड़ता है।

अन्त में यह कहना भी असंगत न होगा कि संवेदना और प्रत्यक्ष के आविर्भूत होने में विभिन्न शारीरिक क्रियाएँ होती हैं जिसे देह रचना विज्ञान ही अच्छी तरह व्यक्त कर सकता है।

आम के प्रत्यक्ष में विश्लेषण करने पर निम्नाङ्कित मानसिक क्रियाएँ ज्ञात होंगी।

सबसे पहले हमें आम की संवेदना होती हैं और उस संवेदना के होते ही हम उसे अन्य संवेदनाओं के साथ तुलना करते हैं। (२) इस तुलना प्रक्रिया के बाद हमारे मन में साहचर्य (Association) की क्रिया होती है जिसके द्वारा हम उसमें गत अनुभवों के आधार पर उन गुणों का निरूपण करते हैं जिनकी हमें संवेदना नहीं होती है, जैसे, मिठास इत्यादि। (३) इसके बाद प्रत्यभिज्ञा (Recognition) की क्रिया होती है जिसके द्वारा हम यह जानने में समर्थ होते हैं कि यह आम है। (४) प्रत्यक्ष में वस्तुकरण (Objectification) की प्रक्रिया भी मौजूद रहती है जिसके द्वारा हम सभी गुणों का निरूपण उस पदार्थ में करते हैं। (५) हमें प्रत्यक्ष मे संघातकरण प्रक्रिया

(Process of unification) भी मिलती है। इसके का मतलब यह है कि जब हम आम को देखते हैं तो उसके अलग-अलग भागों को नहीं देखते, बल्कि उसकी समग्रता (Unity) को ही देखते हैं। अन्ततोगत्वा आम के प्रत्यक्ष में स्थानीकरण (Localization) की क्रिया होती है जिसके द्वारा हम उसकी सत्ता को बाह्यविश्व में स्वीकार करते हैं। इस प्रकार आम के प्रत्यक्ष में हमें तुलना, साहचर्य प्रत्यभिज्ञा, वस्तुकरण, संघातकरण और स्थानीकरण की क्रियाएँ होती हैं।

Q. 41 Distinguish between perception and illusion, How do you account for illusion ? (1945 S.)

प्रत्यक्ष (Perception) और विपर्यय (Illusion) के अन्तरों को व्यक्त करने के पहले यह जानना जरूरी है कि प्रत्यक्ष और विपर्यय दोनों में बाहरी उत्तेजना मौजूद रहती है। जब किसी उत्तेजना की संवेदना प्राप्त होती है और मन उस संवेदना के अर्थ को ठीक-ठीक समझ जाता है तो वह प्रत्यक्ष हो जाता है, किंतु यदि वह उस संवेदना की व्याख्या गलत कर देता है तो वह विपर्यय हो जाता है। मान लीजिए हमें कोई लम्बी चीज दीख पड़ती है जो वस्तुतः रस्सी है और हम समझ जाते हैं कि यह रस्सी है तब तो यह प्रत्यक्ष हुआ। यदि हम इस रस्सी को साँप समझ जाते हैं तो यह विपर्यय हुआ। यहाँ संवेदना दोनों अवस्थाओं में एक ही प्रकार की है, लेकिन प्रत्यक्ष में हमारा मन उसका अर्थ

छोड़ लगाता है और विपर्यय में संवेदना का अर्थ ही गलत कर देता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्यक्ष और विपर्यय में सभी मानसिक क्रियाएँ एक ही तरह की होती हैं, लेकिन अर्थ लगाने की क्रिया अलग-अलग होती है। हम प्रत्यक्ष में उत्तेजना को उसके वास्तविक रूप में जानते हैं, किंतु विपर्यय में हमें वास्तविक उत्तेजना का ज्ञान नहीं होता है। प्रत्यक्ष का रूप और आकार सबके लिए समान होता है और स्थायी भी, परन्तु विपर्यय में एक ही पदार्थ भिन्न-भिन्न दिखलाई दे सकता है। प्रत्यक्ष स्थायी होता है, किंतु विपर्यय अस्थायी (Temporary) होता है। प्रत्यक्ष विश्व जनीन (Universal) होता है, किंतु सभी विपर्यय विश्व जनीन नहीं होते इत्यादि। प्रायः प्रत्यक्ष और विपर्यय में यही अन्तर हैं।

विपर्यय कई कारणों से होते हैं। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि बहुत सी छोटी-छोटी चीजें कहीं रखी हुई हैं और वहीं उन्हीं के समान एक बड़ी चीज रखी हुई है। इस अवस्था मे वह लम्बी चीज अपनी वास्तविक लम्बाई से अधिक लम्बी मालूम होती है। यहाँ यह विपर्यय विरोध (Contrast) के कारण होता है।

बहुत स्थलों पर विपर्यय ज्ञानेन्द्रिय के दोष के कारण होता है। जिस मनुष्य की आँख पीली हो जाती है उसे सभी चीजें पीली मालूम होती हैं। इस प्रकार ज्ञानेन्द्रिय दोष भी विपर्यय का कारण होता है।

आदत भी विपर्यय का कारण होती है। जिस आदमी को किसी चीज को ठीक-ठीक करने या बदलने की आदत होती है वह आदत के कारण गलत चीज को भी ठीक कर देता है, जैसा कि प्रूफरीडर किया करते हैं। यदि कोई आदमी तम्बाकू का सेवन करने का आदी रहता है तो वह दूसरे को कोई चीज मलते हुए देखकर उसे तम्बाकू ही समझ लेता है।

कभी-कभी आशा (Expectation) से भी विपर्यय होता है। यदि हम किसी को आठ बजे आने के लिए निमन्त्रित करते हैं और यदि उसे जोहते रहते हैं तो दूसरे की पद-ध्वनि भी हम उसी विशेष व्यक्ति की पदध्वनि समझ लेते हैं।

भय और चिन्ता भी विपर्यय को उत्पन्न करते हैं। प्रायः ऐसा देखने में आता है कि जो व्यक्ति भूत प्रेत से अधिक डरता है वह अँधेरी रात में किसी छोटे खम्भे को भी भूत ही समझ लेता है। इसी प्रकार जिस महल्ले में अधिक चोरी होती है, वर्त्तन की जरा-सी आवाज भी चोर के आने की आवाज मालूम होती है।

इन कारणों के अतिरिक्त विपर्यय के और कारण भी होते हैं जिनका उल्लेख यहाँ नहीं किया जाएगा।

Q; 42 Give an analysis of perception using an example. (1946 S) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ सन् १६४८ S का उत्तर देखें।

Q. 43 Show by the help of example, how perception depends on past experience. (1946 A).

प्रत्यक्ष (Perception) के द्वारा हमें किसी पदार्थ की जानकारी प्राप्त होती है। हमलोग जानते हैं कि संवेदना में केवल हमें किसी वस्तु के गुण की चेतना मात्र होती है, लेकिन प्रत्यक्ष में हम उस पदार्थ को पूर्णतः जान जाते हैं। यहाँ प्रश्न यह होता है कि प्रत्यक्ष हमारे गत अनुभव (Past experience) पर कैसे निर्भर करता है ?

इसे अच्छी तरह समझने के लिए हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जब किसी उत्तेजना (Stimulus) की संवेदना हमें होती है तो हमारा मन तुरंत उस संवेदना के अर्थ को समझने की कोशिश करता है और पुनः वह संवेदनाएँ सार्थक हो जाती हैं। संवेदनाओं में सार्थकता गत अनुभव के आधार पर लाई जाती है। जिस उत्तेजना का अनुभव हमें भूतकाल में नहीं हुआ रहता है उसकी संवेदना का अर्थ समझने में असमर्थ हो जाते हैं, लेकिन जिसका अनुभव हमें पहले से रहता है उसके अर्थ को समझने में हमें कुछ भी कठिनाई नहीं होती है।

प्रत्यक्ष एक सक्रिय मानसिक क्रिया है। इसमें मन निष्क्रिय नहीं रहता, बल्कि उसे जो संवेदनाएँ प्राप्त होती हैं, उनमें सक्रिय होकर सार्थकता (Meaning) ला देता है। यह सार्थकता गत अनुभव के कारण ही आती है। इसे उदाहरण लेकर समझाने में विशेष सुविधा होगी। मान लीजिए हमें कोई पीली और गोल चीज दिखलाई देती है और हम यह शीघ्र ही समझ जाते हैं कि यह नारंगी है। यहाँ यही प्रश्न होता कि हमें संवेदना

जो पीले रंग इत्यादि की होती है और उसी से हम उसे नारंगी कैसे समझ जाते हैं। इस सम्बन्ध में हमें यह याद रखना जरूरी है कि जब हमें नारंगी के रंग इत्यादि की संवेदना होती है तो हम उस संवेदना की तुलना और भिन्नता अपनी अन्य संवेदनाओं से करते हैं। फिर उन संवेदनाओं का साहचर्य अपने गत के अनुभवों से करके उनके अर्थ को समझ जाते हैं। हम भूतकाल में नारंगी को चखे हुए हैं और हमें इसका ज्ञान है कि नारंगी खाने में मजेदार और बढ़िया होती है। वर्तमान में हमें इन सबकी संवेदनाएँ नहीं होती हैं, लेकिन चूँकि गत में हम इन सभी गुणों का अनुभव साथ-साथ किए हुए हैं, इसलिए वर्तमान संवेदनाएँ हमें अनुपस्थित संवेदनाओं की याद दिला देती हैं और हम तुरंत समझ जाते हैं कि यह नारंगी है। प्रत्यक्ष में स्मृति और संवेदना का इस प्रकार गालन (Fusion) रहता है कि उन्हें हम एक दूसरे से अलग नहीं कर सकते हैं। यहाँ एक बात और ध्यान में रखने योग्य है कि गत अनुभव के अभाव में प्रत्यक्ष नहीं होता।

संवेदना में सार्थकता अतीत के अनुभव से ही आती है, लेकिन सार्थकता लाने की इस प्रक्रिया का ज्ञान हमें नहीं होता है। यह कार्य मन इतना शीघ्र करता है कि संवेदना होने और उसकी व्याख्या करने में कुछ भी विलम्ब नहीं होता है। हम पहले ही कह चुके हैं कि गत अनुभव में हमें प्रत्यक्ष नहीं होता है। हमलोग नए पदार्थों की संवेदना होने पर उन्हें

समझने की कोशिश करते हैं और इस कोशिश को हमें चेतना भी होती है। जब दश बजे कालेज का घन्टा बजता है तो हमें घण्टे की सार्थकता मालूम हो जाती है, लेकिन एक नए आदमी को उसकी सार्थकता नहीं मालूम होती है; क्योंकि उसका अनुभव उसे पहले से नहीं रहता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि किसी पदार्थ का प्रत्यक्ष हमारे गत अनुभव पर ही निर्भर करता है।

Q. 44 Define illusion, and illustrate its various types. Why do illusions occur? (1947 A)

जब किसी उत्तेजना से हमें वास्तविक ज्ञान न होकर अशुद्ध ज्ञान होता है तो उसे विपर्यय कहते हैं। जब उत्तेजनाओं से समुत्पन्न संवेदनाओं की व्याख्या अशुद्ध रूप से की जाती है तो उसे विपर्यय कहते हैं। मान लीजिए अन्धेरे में रस्सी पड़ी हुई है, यदि आप उस रस्सी को रस्सी समझते हैं तो वह प्रत्यक्ष हुआ। यहाँ आपको असली उत्तेजना का ज्ञान होता है। थोड़े शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि एक चीज को दूसरी चीज समझने को ही विपर्यय (Illusion) कहते है।

हम विपर्यय को विभिन्न दृष्टिकोण से विभाजित कर सकते हैं। व्यापकता के आधार पर विपर्यय दो प्रकार का होता है (१) विश्वजनीन और (२) वैयक्तिक। जो विपर्यय विश्व के सभी मनुष्यों को होता है उसे विश्वजनीन (Universal) विपर्यय कहते हैं। यदि हम रेल से यात्रा करें तो हमें आसपास के

पेड़ पौधे इत्यादि दौड़ते हुए नजर आएंगे। यह विपर्यय सबको होता है, इसलिए इसे विश्वजनीन विपर्यय कहेंगे। जो विपर्यय किसी व्यक्ति विशेष को होता है, सबको नहीं, उसे वैयक्तिक कहते हैं। रस्सी को साँप देखना या सभी चीज को पीली देखना इत्यादि व्यक्तिगत विपर्यय कहलाते हैं। यहाँ इस बात का उल्लेख कर देना भी आवश्यक है कि विश्वजनीन विपर्यय को स्थायी विपर्यय (Permanent illusion) भी कह सकते हैं और व्यक्तिगत विपर्यय को अस्थायी (Temporary) विपर्यय।

ज्ञानेन्द्रियों के आधार पर हम विपर्यय को उतने प्रकार में बाँट सकते है जितने प्रकार की ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, क्योंकि देखने में ही विपर्यय नहीं होता, बल्कि सुनने, स्पर्श करने, चलने इत्यादि में भी विपर्यय होता है।

इसके अतिरिक्त हम विपर्यय को और प्रकारों में भी बाँट सकते हैं, जैसे, मूलर लायर का विपर्यय, अरस्तू का विपर्यय, इत्यादि। ज्योमेट्री के जितने भी विपर्यय हैं वे सभी मूलर लायर विपर्यय के नाम से प्रसिद्ध हैं।

विपर्यय की उत्पत्ति के कारणों को जानने के लिए प्रश्न नम्बर ३१ सन १६४५ S. का उत्तर देखें।

Q. 45 Distinguish between sensation and perception. State the mental processes involved in Perceiving an orange. (1947 S)

इस प्रश्न के पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर २०

सन् १९४९ A. का उत्तर देखें और दूसरे भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६, १९४८ S. का उत्तर देखें।

Q. 46 Explain the process of perceiving an object with reference to an example. (1948 S.)

जब हमें किसी पदार्थ (नारंगी) का प्रत्यक्ष होता है तो उस प्रत्यक्ष के पहले हमारे मन में तुलना की क्रिया होती है। हमें नारंगी की कुछ संवेदनाएँ ही प्राप्त होती हैं। उन संवेदनाओं की तुलना हमारा मन उसके समान (Similar) तथा असमान (Dissimilar) संवेदनाओं से करता है। उसके बाद मन में साहचर्य (Association) की क्रिया होती है और उसी साहचर्य क्रिया के द्वारा जो संवेदनाएँ हमें वर्तमान में प्राप्त नहीं होती हैं उन्हें वर्तमान संवेदनाओं के साथ जोड़ देते हैं। ऊपर के उदाहरण में हमें पीले रंग और गोलाई इत्यादि की संवेदना होती है, लेकिन स्वाद वगैरह की संवेदना नहीं होती। इन सबों की याद हमे भूत अनुभव (Past experience) के आधार पर आ जाती है और हम उन्हें वर्तमान संवेदनाओं से मिला देते हैं। तभी तो हम नारंगी के स्वाद को भी जान जाते हैं। इसके बाद हमारे मन में प्रत्यभिज्ञा (Recognition) की क्रिया होती है जिसके द्वारा कि हम उसे अन्य पदार्थों से अलग करते हैं। प्रत्यभिज्ञा निश्चित (Definite) और अनिश्चित (Indefinite) दो प्रकार की होती है। इस प्रकार प्रत्यक्ष में संश्लेषण क्रिया (Synthesis) भी होती है जिसके द्वारा हम

भूत और वर्त्तमान अनुभवों को मिला देते हैं। तत्पश्चात् वस्तुकरण (Objectification) प्रक्रिया होती है। इसका मतलब यह है कि जितनी संवेदनाएँ हमें प्राप्त होती हैं उन सब का सम्बन्ध हम एक पदार्थ विशेष जिसे नारंगी कहते हैं उससे कर देते हैं। गुण की सत्ता बिना गुणी के असंभव है, इसलिए उन गुणों का निरूपण पदार्थ विशेष से किया जाता है। नारंगी के प्रत्यक्ष में समग्रता की भी क्रिया विद्यमान रहती है। समग्रता (Unification) का मतलब यह है कि हम नारंगी के विभिन्न गुणों को अलग-अलग नहीं देखते हैं, बल्कि उन सबको एक संगठित पदार्थ (नारंगी) के रूप में देखते हैं। अन्त में नारंगी के प्रत्यक्ष में स्थानीकरण (Localization) की क्रिया होती है। स्थानीकरण का मतलब यह है कि जब हमे नारंगी का प्रत्यक्ष होता है तो हम उसकी सत्ता को वाह्य विश्व में स्थापित कर देते हैं कि यह अमुक स्थान मे विद्यमान है। तत्पश्चात् हम उसकी सत्ता मे विश्वास भी मे विद्यमान है। तत्पश्चात् हम उसकी सत्ता मे विश्वास भी करते हैं। इस प्रकार इसके प्रत्यक्ष मे विश्वास क्रिया (Process of belief) भी होती है और नारंगी का प्रत्यक्ष पूर्ण रूपेण होता है। थोड़े शब्दों मे हम यह कह सकते हैं कि नारंगी के प्रत्यक्ष में तुलना, साहचर्य, प्रत्यभिज्ञा, संश्लेषण, वस्तुकरण, संघात, स्थानीकरण और विश्वास की क्रियाओं का पालन रहता है।

Q. 47 What is perception ? How does it differ from illusion and hallucination ?

प्रथम भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३१ सन् १६४५ S का उत्तर देखें। प्रत्यक्ष और विपर्यय के अन्तरों को जानने के लिए भी उसी को उत्तर देखें।

प्रत्यक्ष और विभ्रम (Hallucination) में यही अन्तर है कि प्रत्यक्ष में एक वाहरी उत्तेजना विद्यमान रहती है, लेकिन विभ्रम मे कोई वाहरी उत्तेजना मौजूद नहीं रहती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इन दोनों में समान अंश में ही विश्वास और स्पष्टता रहती है, लेकिन प्रत्यक्ष में उत्तेजना मौजूद रहती है, लेकिन विभ्रम में उत्तेजना का अभाव (Non-existence) रहता है।

Q. 48—What is illusion ? Distinguish it from perception and hallucination.

पहले भाग के उत्तर के लिए और प्रत्यक्ष और विपर्यय के अन्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३४ और ३१, १६४६ A. और १६४५ S. देखें।

विपर्यय और विभ्रम में मुख्य अन्तर यह है कि विपर्यय में कोई उत्तेजना रहती है, लेकिन विभ्रम में कोई उत्तेजना नहीं रहती है। सभी विपर्यय की सत्ता पर हमें विश्वास नहीं रहता, लेकिन विभ्रम की सत्ता में हमें विश्वास रहता है। विपर्यय सामान्य व्यक्ति को भी होता है, लेकिन विभ्रम प्रायः असाधारण व्यक्ति को ही होता है। विपर्यय बोधात्मक (Objective) होता है, लेकिन विभ्रम उद्देश्यात्मक (Subjective) होता है।

विपर्यय और विभ्रम के उत्पन्न होने की क्रियाओं में भी भिन्नता रहती है।

Q. 49—Distinguish between perception and illusion, stating the points of similarity and difference between the two. (1949 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ४१ का उत्तर देखें।

Q. 50 Analyse the process of perceiving by reference to example from visual perception (1949 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर 46 के उत्तर को पढ़ें।

Q. 51 Trace the process of a perceptual experience step by step, from the moment a stimulus begins to act, (1950 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ४६ के उत्तर को पढ़ें।

CHAPTER 6

ATTENTION

Q. 52- What is attention ? Explain and illustrate different kinds of attention. 1944 A)

ध्यान (Attention) वह मानसिक क्रिया है जिसके द्वारा हम अपने मन को सभी प्रकार की उत्तेजनाओं से हटाकर किसी खास उत्तेजना पर लगाते हैं। ध्यान हमेशा एक ही चीज पर लगाया जा सकता है ; कई चीजों पर एक साथ नहीं लगाया जा

सकता। वस्तुतः ध्यान एक चयनात्मक प्रक्रिया (Selective process) है जिसके द्वारा अन्य उत्तेजनाओं को त्यागकर आवश्यकतानुसार किसी एक उत्तेजना को अपनी प्रतीति-क्षेत्र का विषय बनाते हैं। यह अत्यन्त सीमित (Limited) और गत्यात्मक (Dynamic) होता है। न तो कई चीजों पर हम एक साथ ध्यान लगा सकते हैं और न एक ही चीज पर देर तक ध्यान रख सकते हैं। यह बराबर एक विषय से दूसरे विषय पर जाता रहता है। ध्यान के दो पहलू होते हैं, भावात्मक (Positive) और अभावात्मक (Negative), किसी चीज को ध्यान का विषय बनाना भावात्मक और किसी चीज से ध्यान हटाना इसका अभावात्मक पहलू है। यह अनुसंधानात्मक (Exploratory) होता है और ध्यानावस्था में हम लोग तैयारी की अवस्था में रहते हैं। सारांश यह है कि ध्यान एक प्रकार की मानसिक क्रिया है जिसमें हमलोग अपने मन को सभी ओर से हटाकर चौकसी के साथ किसी चीज को अपनी चेतना का विषय बनाते हैं।

विभिन्न दृष्टिकोण पर विचार करने पर हम ध्यान को तीन प्रकार में बाँट सकते हैं (१) ऐच्छिक ध्यान Voluntary attention), (2) अनैच्छिक ध्यान (Non Voluntary attention) और (३) अनभिप्रेत ध्यान (Involuntary attention). ।

जब हम किसी विषय पर अपना ध्यान इच्छा पूर्वक चेष्टा

करके लगाते हैं तो इस प्रकार के ध्यान को ऐच्छिक ध्यान कहते हैं। जब श्रोता किसी के भाषण को समझने के लिए इच्छानुसार यत्न पूर्वक अपने ध्यान को उसके भाषण पर लगाता है तो हमें ऐच्छिक ध्यान का उदाहरण मिलता है।

जब उत्तेजना इतनी रुचिकर (Interesting) रहती है कि हमारा ध्यान सहसा बिना कोशिश के उधर चला जाता है तो उस ध्यान को अनैच्छिक ध्यान कहते हैं। जब हम कोठरी में बैठकर पढ़ते रहते हैं और बाहर के गाने पर हमारा ध्यान सहसा चला जाता है तो हमें इस प्रकार के ध्यान का उदाहरण मिलता है। इस प्रकार के ध्यान में हम उत्तेजना को अपनी इच्छा के प्रतिकूल ध्यान का विषय नहीं बनाते हैं, बल्कि इच्छा के अनुसार ही बनाते हैं। हाँ, इतना अवश्य रहता है कि हमें ध्यान लगाने के लिए कोशिश नहीं करनी पड़ती है।

जब हम अपने ध्यान को किसी चीज पर इच्छा के खिलाफ कोशिश करके लगाते हैं तो इस प्रकार के ध्यान को अनभिप्रेत ध्यान कहते हैं। जब दो साथी कमरे का दरवाजा बन्द करके किसी आवश्यक बात में तल्लीन रहते हैं और उस समय कोई दरवाजा खटखटाता है तो उनका ध्यान उस खटखटाहट पर इच्छा के खिलाफ जाता है। अतएव इस ध्यान को अनभिप्रेत ध्यान कहेंगे।

ध्यान के विषय के स्वरूप (Nature) के आधार पर ध्यान को हम दो प्रकार में बांट सकते हैं, (१) प्रत्यक्ष (Sensory) और (२) अप्रत्यक्ष ध्यान (Ideational attention).

जब हम किसी मूर्त पदार्थ (concrete object) पर अपना ध्यान लगाते हैं तो इस प्रकार के ध्यान को प्रत्यक्ष ध्यान कहते हैं। कुर्सी, टेबुल, पुस्तक और फूल इत्यादि पर जब ध्यान लगाएंगे तो उसे प्रत्यक्ष ध्यान कहेंगे।

अमूर्त विषय पर जब हम अपने ध्यान को लगाते हैं तो उसे अप्रत्यक्ष ध्यान कहते हैं। हम जब अपनी मानसिक क्रियाओं या मानसिक प्रतिमाओं, संवेगों इत्यादि पर ध्यान लगाते हैं तो हमें अप्रत्यक्ष ध्यान का उदाहरण मिलता है।

फिर दूसरे दृष्टिकोण से ध्यान दो प्रकार का होता है (१) विश्लेषणात्मक (Analytical) ध्यान और (२) संश्लेषणात्मक (Synthetical) ध्यान।

जब हम किसी पदार्थ के विभिन्न अवयवों पर ध्यान लगाते हैं तो उसे विश्लेषणात्मक ध्यान कहते हैं। किसी पेड़ के तने, जड़, पत्तियों पर अलग-अलग ध्यान लगाने पर हमें इस प्रकार के ध्यान का उदाहरण मिलता है।

संश्लेषणात्मक ध्यान में हम किसी पदार्थ पर समग्रता के रूप में ध्यान लगाते हैं, उसके अलग-अलग हिस्सों पर नहीं। जब हम नारंगी (समग्र नारंगी) को अपने ध्यान का विषय बनाते हैं तो हमें संश्लेषणात्मक ध्यान का उदाहरण मिलता है।

इसी प्रकार ध्यान तात्कालिक (Immediate) और व्युत्पन्न (Derived) भी होता है। तात्कालिक ध्यान में हमारा ध्यान किसी चीज पर अनायास चला जाता है, लेकिन व्युत्पन्न ध्यान

थे हमें कोशिश करके किसी चीज पर अपना ध्यान लगाना पड़ता है। प्रायः यही ध्यान के मुख्य प्रकार हैं।

Q. 53—Why do we attend to a particular object rather than another? Describe briefly attitude in attention. (1914 S).

"हम किसी एक खास पदार्थ को दूसरे पदार्थ की अपेक्षा अपने ध्यान का विषय क्यों बनाते हैं?" इसे जानने के लिए हमें इस बात पर प्रकाश डालना आवश्यक है कि किसी चीज पर हम अपना ध्यान दो प्रकार के कारणों से लगाते हैं। वे कारण या तो बाहरी होते हैं जिनका सम्बन्ध कि उस खास उत्तेजना से रहता है या वे कारण भीतरी (Internal) होते हैं जिनका सम्बन्ध हमारे मन से रहता है। बाहरी कारणों को बाह्य ध्यान-प्रतिबन्धक (External condition of attention) और भीतरी कारणों को आन्तरिक ध्यान-प्रतिबन्धक (Internal condition of attention) कहते हैं। अब हम उन ध्यान-प्रतिबन्धकों का क्रमशः संक्षेप में यहाँ वर्णन करेंगे।

बाह्य ध्यान प्रतिबन्धक (Objective conditions of attention.)

उत्तेजना की तीव्रता (Intensity) एक खास विशेषता है जिसके सबब से हम किसी उत्तेजना को अन्य उत्तेजनाओं का बहिष्कार कर अपने ध्यान का विषय बनाते हैं।

यदि किसी उत्तेजना की कोई निश्चित रूप रेखा (Definite

form) रहती है तो हम उस उत्तेजना पर अपना ध्यान लगाते हैं। हमारा ध्यान सूर्य या चन्द्रमा पर निश्चित रूप के कारण चला जाता है; लेकिन आकाश पर नहीं जाता है।

यदि बहुत सी चीजें हमारी ज्ञानेन्द्रियों को प्रभावित करती हैं तो उन सब पर हमारा ध्यान नहीं जाता, बल्कि उसी चीज पर हमारा ध्यान जाता है जिसमें कोई विचित्रता (Striking quality) रहती है।

उत्तेजना की नवीनता (Novelty of the stimulus) भी हमारे ध्यान को अपनी ओर खींच लेती है। हम सभी चीजों को अपनी चेतना का विषय नहीं बनाते हैं, बल्कि यदि कोई नई चीज रहती है तभी अपना गौर उधर फरमाते हैं।

विरोध (Contrast) के कारण भी हमारा ध्यान किसी चीज पर चला जाता है। यदि बहुत सी चीजें एक समान हों और उनमें कोई चीज ऐसी हो जो और सबों से भिन्न हो तो उसकी भिन्नता के कारण हमारा ध्यान उधर चला जाता है।

दुर्लभता (Rareness) उत्तेजना की एक ऐसी खसूसीयत है जिसकी वजह से हम किसी चीज को अपने ध्यान का विषय बनाते हैं।

हम सभी चीजों पर अपना ध्यान नहीं लगाते हैं, बल्कि उन चीजों की ओर ही हमारा ध्यान जाता है जो परिवर्तित (Change) होती रहती हैं या जिनमे किसी प्रकार की गति (Movement) रहती है।

उत्तेजना का एकाकीपन (Isolation of the stimulus) और स्वरूप (Nature of the stimulus) भी हमारे ध्यान को अपनी ओर खींच लेता है। इसी प्रकार यदि कोई चीज हमें रहस्यमय मालूम होती है तो उधर हमारा ध्यान बरबस चला जाता है।

आत्मगत ध्यान-प्रतिबन्धक (Subjective conditions of attention.)

हम सभी चीजों पर ध्यान नहीं देते हैं, अपितु उसी चीज की ओर हमारा ध्यान जाता है जिसमें हमारी रुचि (Interest) रहती है। अतएव आत्मगत कारणों में रुचि ध्यान का एक बहुत ही बड़ा कारण है।

इतना ही नहीं, बल्कि हम उसी चीज पर अपना ध्यान दौड़ाते हैं जो हमारी मूल प्रवृत्ति, प्रकृति और स्वभाव (Instinct, Disposition and temperament) के अनुकूल होती है।

ध्येय, संवेग और स्थायीभाव (Purpose, Emotion and sentiment) के कारण भी हम किसी चीज पर अपना ध्यान लगाते हैं। किसी ध्येय के लिए किसी चीज पर ध्यान देना या संवेग के सबब से किसी चीज पर गौर करने के उदाहरण रोज ही मिलते हैं।

ये उपर्युक्त आत्मगत ध्यान प्रतिबन्धक हैं, लेकिन इनके अलावे हमारा ध्यान किसी चीज पर सामाजिक प्रभाव (Social influence) और वंशानुक्रम (Heredity) की वजह से

भी चला जाता है। प्रायः इन्हीं कारणों से हम एक चीज पर और फरमाते हैं और अन्य चीजों पर नहीं।

जब हमलोगों का ध्यान किसी दृश्य पर रहता है तो उस समय हमलोगों की आँखें बिलकुल खुली रहती हैं और उसे अच्छी तरह देखने के लिए हमलोग उधर झुके रहते हैं। जब हमलोग किसी ध्वनि को अपने ध्यान का विषय बनाते हैं तो उस समय अपने कान को उधर घुमा देते हैं। साँस बहुत धीरे-धीरे लेते हैं और किसी तरह का शोर गुल नहीं करते। जब हमारा ध्यान अपनी मानसिक क्रियाओं पर रहता हैं तो उस समय हम लोग अपनी आँखें मूँद लेते हैं और बहुत चौकन्ना तथा शान्त रहते हैं। कभी-कभी ध्यान के समय सर खुजलाना, होठों पर उंगली रखना इत्यादि भी होता है। इसी प्रकार और भी बहुत सी बातें होती हैं।

Q. 51 Explain the different kinds of attention. Point out the motor accompaniments of attention. (1945 A.)

पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ सन् १६४४ A. का उत्तर देखें।

ध्यानावस्था में हमलोगो का शारीरिक अभियोजन (Bodily adjustment) भी होता है। सब से पहले तो जब हमलोग किसी चीज पर ध्यान लगाते हैं तो उस समय बिलकुल चौकन्ने हो जाते हैं। प्रायः हमलोग स्थिर और शान्त बन जाते

हैं। जब ध्यान का विषय कोई दृश्य रहता है तो उस समय हम लोगों की आँखें पूर्णतः खुली रहती हैं और उधर ही एकटक ताका करते हैं। जब किसी चीज को सुनते हैं तो जिधर से वह आवाज आती है उधर अपने कान को घुमा देते हैं। उस समय किसी तरह की बातचीत नहीं करते हैं। किसी मानसिक प्रतिमा पर ध्यान लगाते हैं तो उस समय हमलोग अपनी आँखों को बन्द कर लेते हैं। कभी-कभी ध्यान के समय साँस को रोक देना, या धीरे-धीरे साँस लेना, मुट्ठी बाँध लेना, दाँतों को कसकर दबा लेना इत्यादि भी होता है। ध्यान के वक्त हमलोगों की स्नायुओं में भी सिकुड़न आ जाती है। इन उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त ध्यान के समय रक्त प्रवाह की गतियों में भी परिवर्तन हो जाता है। प्रयोग करने पर और भी कई आन्तरिक क्रियाएँ देखने में आई हैं। ध्यान के समय शारीरिक अभियोजन में और भी बहुत से हाव-भाव देखने में आते हैं जो पूर्णतः व्यक्ति-विशेष पर निर्भर करते हैं।

Q. 55 What is attention ? Point out the objective conditions of attention' (1945 S.)

पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ सन् १६४४ A. देखें और दूसरे भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ व १६४४ S देखें।

Q. 56-- Define attention and describe some of the conditions of attention. (1946 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ और ३६ व १६४४ A & S देखें।

Q. 57 Describe and illustrate different kinds of attention (1949 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ सन् १६४४ A देखें।

Q. 58 State and explain the various conditions of attention. (1947 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ व सन् १६४४ S देखें।

Q. 59 What is attention ? Describe the conditions of attention. (1948 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ और ३६ व सन् १६४४ A और १६४४ S देखें।

Q. 60 What is attention ? Distinguish between (a) non-voluntary and involuntary attention, (b) Sensory and Ideational attention and (c) Immediate and derived attention.

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ सन् १६४४ A देखें।

Q. 61 Describ the nature of attention and point out the bodily adjustment in attention.

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६ सन् १९४४ A का पहला अवतरण देखें और शारीरिक अभियोजन के लिए प्रश्न नम्बर ३६ व १९४५ का उत्तर देखें।

Q. 62 -Define attention and describe the subjective conditions of attention.

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३६, ३६ व १९४४ A & S देखे।

Q. 63--Describe the difference between involuntary and voluntary attention with examples. What is spontaneous attention ? (1949 A.)

Involuntary (अनभिप्रेत) और Voluntary (ऐच्छिक) ध्यान के अन्तरों के लिये प्रश्न नम्बर ५२ और दूसरे भाग के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ५२ के (a) का और ६० के (c) भाग में Immediate attention की व्याख्या देखे। Immediate or non-voluntary attention को ही spontaneous attention भी दूसरे दृष्टिकोण से कहते हैं।

Q. 64 Distinguish between voluntary and spontaneous attention. Under what conditions may a child's attention to his lessons be spontaneous ? (1950 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ५२ के पहले भाग को पढ़ें।

इस प्रश्न के दूसरे भाग के उत्तर के लिये ध्यान के उन सभी-अंगों (Factors) का वर्णन करें जिनके कारण बच्चे का ध्यान सहसा विना प्रयास के किसी उत्तेजना पर चला जाता है।

CHAPTER 7

MEMORY AND FORGETTING.

Q. 65 Distinguish between recall and recognition. How is it easier to remember meaningful materials than unmeaningful materials ? (1944 A.)

प्रत्यावाहन (Recall) और प्रत्यभिज्ञा (Recognition) के अन्तरों का वर्णन करने के पहले यह कह देना आवश्यक है कि ये दोनों स्मृति के आवश्यक अंग है। प्रत्यावाहन और प्रत्यभिज्ञा के विना स्मृति कदापि नहीं हो सकती।

हम अपने गत अनुभवों को संस्कार रूप में धारण करते हैं और अवसर पड़ने पर आवश्यकतानुसार उनका प्रत्यावाहन करते हैं। प्रत्यावाहन, धारणा पर ही निर्भर करता है। जिस अनुभव को हम लोग धारण नहीं किए रहते है उसका प्रत्यावाहन, नहीं होता है। प्रत्यभिज्ञा मे हमलोग किसी वर्तमान अनुभव, के विषय में यह अनुभव करते हैं कि इसका अनुभव हमे अपने अतीत मे हो चुका है।

प्रत्यावाहन पूर्ण या अपूर्ण होता है, परंतु प्रत्यभिज्ञा निश्चित या अनिश्चित (Definite or indefinite) होती है। जब

हम किसी घटना को याद करते हैं और पुनः भविष्य में उसका स्मरण पूर्णतः करते हैं तो उसे पूर्ण प्रत्यावाहन कहते हैं, किंतु जब उसके कुछ ही अंश को स्मरण करने में समर्थ होते हैं तो उसे अधूरा (Imperfect) प्रत्यावाहन कहते है। प्रत्यभिज्ञा में जब हम देश और काल के सन्दर्भ के साथ किसी घटना को पह-चानते हैं तो उसे निश्चित प्रत्यभिज्ञा कहते है, लेकिन जिसमें देश और काल का अभाव रहता है उसे अनिश्चित प्रत्यभिज्ञा कहते है।

हमारे मन में जितने अनुभवों का संस्कार रहता है उन सबका प्रत्यावाहन नहीं होता, क्योंकि इस पर संवेग (Emotion) दमन (Repression) और भूताभिमुख (Retroactive inhibition) इत्यादि का भी प्रभाव पड़ता है। परन्तु प्रत्यभिज्ञा में इन सब का प्रभाव नहीं पड़ता, इसलिए प्रत्यभिज्ञा विशेष अनुभवों को होती है। प्रयोग करके यह देखा गया है कि जिसका प्रत्यावाहन करने में हम असमर्थ होते हैं उसकी प्रत्यभिज्ञा में हम असमर्थ नहीं होते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्यावाहन कठिन प्रक्रिया है, किंतु प्रत्यभिज्ञा आसान प्रक्रिया है।

प्रत्यावाहन असत्य नहीं होता, परन्तु प्रत्यभिज्ञा कुछ कारणों से असत्य भी होती है। हम प्रत्यावाहन उसी का करते हैं जिसका कभी हमें अनुभव हुआ रहता है, लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि हमें किसी स्थान विशेष या घटना विशेष का

जीवन में पहले पहल अनुभव होता है, परन्तु तिस पर भी हमें यही मालूम होता है कि इसका अनुभव हमें पहले कभी हो चुका है।

प्रत्यक्ष, प्रत्यभिज्ञा में सहायता पहुँचाता है, लेकिन प्रत्यावाहन में नहीं। यदि हम किसी आदमी से पूर्ण परिचित रहते हैं तो सतत प्रयास करने पर भी उसके नाम को याद करने में असफल हो जाते हैं, लेकिन उसे देखते ही पहचान जाते हैं।

जब हमें सार्थक और निरर्थक दो प्रकार की चीजों का अनुभव होता है तो हम सार्थक चीजों को आसानी से याद कर लेते हैं, लेकिन निरर्थक चीज को याद करने में कठिनाई होती है। ऐसा क्यों होता है? यदि विचार पूर्वक देखें तो हमें मालूम होगा कि सार्थक चीजों के अवयवों में तार्तिक सम्बन्ध (Logical relation) और साहचर्य (Association) रहता है, इसलिए उसका संस्कार हमारे मन पर विशेष रूप से पड़ता है। जब एक अवयव याद होता है तो साहचर्य के कारण दूसरा अपने आप याद हो जाता है। परन्तु निरर्थक चीजों में न तो साहचर्य ही रहता है और न तार्किक सम्बन्ध ही। इसलिए हमारे मन पर उनका संस्कार जमा नहीं रहता और उन्हें याद करने में कठिनाई होती है। सार्थकता भी स्मरण करने में विशेष सहायक होती है।

Q. 66 —What is meant by retention? State the characteristics of a Good memory. 1944 S.

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ४३ और ५१, १९४६ S और १९४५ A. देखें।

Q. 67—What do you mean by a good memory? Distinguish between memory and Imagination. (1945 A.)

अच्छी स्मृति (Good memory) का मतलब है किसी चीज को शीघ्र याद कर सकने की शक्ति। हमलोग यह प्रायः देखते हैं कि कोई व्यक्ति किसी पाठ को एक ही बार पढ़कर याद कर लेता है और कोई कई बार पढ़कर। लेकिन कोई मनुष्य ऐसा होता है कि कई बार पढ़ने पर भी उसे कुछ याद नहीं होता। अच्छी स्मृति उसी की समझनी चाहिए जो किसी चीज को अच्छी तरह जल्दी से जल्दी याद कर सके।

परन्तु किसी चीज को शीघ्रता से याद कर लेना ही अच्छी स्मृति नहीं है, बल्कि उसे अधिक काल तक धारण करना भी उसके लिए आवश्यक है। ऐसा देखने में आता है कि कुछ विद्यार्थी ऐसे होते हैं जो किसी चीज को जल्दी से याद तो कर लेते हैं, लेकिन उसे उतना ही शीघ्र भूल भी जाते हैं। इसलिए इस प्रकार की स्मृति अच्छी नहीं कही जा सकती, बल्कि देर तक याद रखना ही इसकी निशानी है।

आप को याद भले ही हो, लेकिन यदि समय पर याद करने में आप असमर्थ हैं तो वह अच्छी स्मृति नहीं है। अतएव समय पर याद होना अच्छी स्मृति के लिए आवश्यक है। यदि

आप की स्मृति अच्छी है तो आप परीक्षा भवन में मौका पड़ने पर सीखी हुई बात को याद कर सकते हैं।

व्यर्थ बातों का भूलना भी अच्छी स्मृति की निशानी है। इसलिए अच्छी स्मृति वही है जो निरर्थक चीजों को भुला दे और सार्थक चीजों को याद रखे। जिस विद्यार्थी की स्मृति अच्छी रहती है वह पूछे जाने पर सार्थक विषयों को ही याद करता है और व्यर्थ की बातों को भूल जाता है। इसलिए जिसमें ये उपर्युक्त विशेषताएँ विद्यमान हों वही स्मृति अच्छी है, अन्यथा नहीं।

स्मृति और कल्पना (Imagination) के अन्तरों का उल्लेख करने के लिए यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि स्मृति और कल्पना में बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। दोनों का सम्बन्ध अतीत का प्रत्यक्ष ज्ञान ही है, लेकिन इतना होते हुए भी इन दोनों में निम्नाङ्कित अन्तर हैं।

स्मृति पुनरावृत्यात्मक (Reproductive) होती है, लेकिन कल्पना रचनात्मक (constructive) होती है। स्मृति में हम अपने गत अनुभव को उसी अवस्था और क्रम में याद करते हैं जिसमें कि उसका अनुभव हमें हुआ रहता है। उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन करने की चेष्टा नहीं करते। कल्पना में हम अपने ज्ञात अनुभव के आधार पर एक नए संसार का निर्माण करते हैं। सोने और घोड़े का अनुभव हमें रहता है और कल्पना के द्वारा हम स्वर्णअश्व का निर्माण कर लेते हैं।

स्मृति में प्रत्यभिज्ञा (Recognition) रहती है, लेकिन कल्पना में इसका अभाव रहता है। जब हमें अतीत की किसी घटना की याद आती है तो हम यह भी जानते हैं कि इसका अनुभव हमें अमुक काल और स्थान में हुआ था, किन्तु कल्पना में ऐसा नहीं होता है।

स्मृति में हमारा सम्बन्ध सदा भूतकाल से रहता है, लेकिन कल्पना का सम्बन्ध किसी काल विशेष से नहीं रहता और यदि रहता भी है तो भविष्य काल से। हम सदा अतीत को ही याद करते हैं, किंतु कल्पना अतीत की भी होती है और भविष्य की भी।

Q. 68. Describe briefly the conditions of recall. (1945 S.)

प्रत्यावाहन (Recall), धारणा (Retention) पर निर्भर करता है। इसलिए जो तथ्य धारणा के लिए सहायक होते हैं वही प्रत्यावाहन में भी सहायक होते हैं।

यदि मन और शरीर दोनो स्वस्थ रहते हैं तो प्रत्यावाहन बहुत अच्छी तरह होता है। किसी चीज को सीखते समय भी मन को बिलकुल ठीक रहना चाहिए जिससे कि सीखी जाने वाली चीज अच्छी तरह से धारणा की जा सके। यदि हम थके हों तो न किसी चीज को अच्छी तरह सीख ही सकते हैं और न उसे धारण ही कर सकते हैं। अतएव प्रत्यावाहन के समय दिल और दिमाग की ताजगी जरूरी है।

प्रत्यावाहन के लिए संकेत (cue) रूप में किसी उत्तेजना का होना आवश्यक है। हमलोग जितने अनुभवों या घटनाओं का अनुभव करते हैं वे बराबर हमारी चेतना में नहीं रहते हैं, बल्कि वे हमारे अर्द्ध चेतन या अचेतन मन में पड़े रहते है। वे हमारी चेतना में तभी आते हैं जब उनको किसी उत्तेजना के द्वारा प्रोत्साहन मिलता है। विद्यार्थी रोज ही इतिहास या भूगोल के विभिन्न विषयों को पढ़ते हैं, लेकिन उनका प्रत्यावाहन परीक्षा भवन में काम पड़ने पर ही करते हैं। यहाँ यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि हमारे मन पर पड़े हुए संस्कारों (Impressions) मे साहचर्य स्थापित हो जाता है और यही साहचर्य मौका पड़ने पर स्मरण करने में सहायक होता है।

सन्दर्भ का प्रभाव (Influence of the context) भी प्रत्यावाहन का एक प्रमुख अंग है, अतएव हमलोगों का प्रत्यावाहन संदर्भ पर भी निर्भर करता है। यदि परीक्षा पत्र में हम से अकबर के जन्म की तिथि पूछी जाती है तो हमें उस समय दूसरी तिथि नहीं याद आएगी, बल्कि उसी तिथि का स्मरण होगा जिसका सम्बन्ध उसके जन्म से है। इस प्रकार एक विशेष बात या घटना का प्रत्यावाहन संदर्भ विशेष पर भी निर्भर करता है।

प्रवृत्ति विशेष (Particular disposition) भी प्रत्यावाहन का एक अंग है। जब हम किसी चीज को देखते हैं तो उस चीज को देखने से हम उसके निर्माता या स्वामी या गुण या

दोष किसी एक को या उनमें से कुछ को ही प्रत्यावाहित करते हैं। ऐसा क्यों होता है? सची बात यह है कि प्रत्यावाहन के समय जैसी हमारी मानसिक स्थिति रहती है वैसी ही चीज को हम याद करते हैं, सबको नहीं। जब कई घटनाओं या अनुभवों का स्मरण संभव रहता है तो उनमें से हम अपनी रुचि के ही अनुसार स्मरण करते हैं। इस प्रकार मानसिक स्थिति का हाथ प्रत्यावाहन में विशेष रहता है।

इन अंगों के अतिरिक्त प्रत्यावाहन के वे सभी अंग हैं जो धारणा के हैं। अतएव प्रत्यावाहन में प्रत्यावाहित अनुभव की सबलता, प्रबलता, सत्ताकाल और स्पष्टता भी सहायक होते हैं। उस घटना का प्रत्यावाहन बहुत ही सरल होता है जिसमें कि हमारा ध्यान और रुचि रहती है। चीजों को समझकर पढ़ना या सीखना भी प्रत्यावाहन का एक विशेष अंग है। इसके अतिरिक्त जिस अनुभव का हम बार-बार अनुभव करते हैं या जो बहुत ही सन्निकट में घटा रहता है उसका प्रत्यावाहन भी बहुत ही आसानी से हो जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रत्यावाहन के कई अंग है।

Q. 69 Describe and illustrate the processes involved in memory. (1946 S.)

इसके पहले कि हम स्मृति के विभिन्न प्रक्रियाओं का उल्लेख करें यह स्पष्ट करना जरूरी है कि स्मृति वह मानसिक प्रकिया है जिसके-द्वारा हम अपने गत अनुभव को अपने वर्तमान प्रतीति-

सत्र में लाते हैं। यदि हम स्मृति प्रक्रिया को विश्लेषण करें तो हमें इसमें तीन प्रक्रियायें मिलेंगी। वे ये हैं धारणा (Retention), प्रत्यावाहन (recall) एवं प्रत्यभिज्ञा (recognition)। अब हम इन तीनों का वर्णन क्रमशः करेंगे।

धारणा (Retention) धारणा वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम अपने किसी अनुभव (experience) वा घटना (events) को मन में धारण करते हैं। वस्तुतः स्मृति का मूल धारणा ही है। अगर हमारे अनुभव वा शिक्षण मन पर अपना संस्कार (impression) न छोड़ें तो हम कुछ भी याद करने में समर्थ न हों। हम अपने गत अनुभव को वर्तमान में याद करते हैं। यह वर्तमान का स्मरण ही इस बात को प्रमाणित करता है कि धारण करने की क्रिया हमलोगों में होती है। जो अनुभव धारण न किया जाये उसे याद कैसे किया जा सकता है? यह इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि धारणा कई बातों पर निर्भर करती है। यदि हमारा मस्तिष्क (Brain) सुरक्षित है अथवा हमारा स्वास्थ्य ठीक है तो हम किसी अनुभव को बहुत अच्छी तरह से धारण कर सकते है। थकावट की अवस्था में सीखी हुई चीज वा प्राप्त किया हुआ अनुभव अच्छी तरह से धारण नहीं किया जा सकता। धारण किया जाने वाला अनुभव या घटना यदि सजीव रहती है तो उसे हम अच्छी तरह धारण करते हैं। अगर किसी अनुभव की पुनरावृत्ति होती रहती है या कोई घटना बहुत देर तक होती रहती है तो

उसे भी हम बहुत अच्छी तरह धारण करते हैं। सन्निकट अनुभव भी हम बखूबी धारण कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त धारणा मानसिक अवस्था पर भी निर्भर करती है। यदि किसी चीज में हमें रुचि (Interest) रहती है तो उसे हम बहुत अच्छी तरह से मन में रख सकते हैं। अवधान (attention) का भी धारणा में कम हाथ नहीं है। इस प्रकार हम देखते हैं कि धारणा कई बातों पर निर्भर करती है। यहाँ हमें यह भी नहीं भूलना चाहिये कि सभी अनुभव हमारे धारण नहीं किये जाते हैं।

प्रत्यावाहन (Recall)–प्रत्यावाहन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा हम अपने धारण किये हुये अतीत अनुभवों को अपनी वर्तमान चेतना मे लाते हैं। यदि प्रत्यावाहन की क्रिया न हो तो हमें किसी भी गत अनुभव को स्मरण करना असंभव हो जाये। इसके द्वारा जो कुछ भी हमलोग धारण किये रहते हैं उसे याद कर सकते हैं। प्रत्यावाहन धारणा पर ही निर्भर करता है, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि जो कुछ भी हम प्रत्यावाहन नहीं कर सके उसे धारण भी नहीं किये हुये हैं। क्योंकि बहुत सी धारण की हुई बाते कई कारणों से प्रत्यावाहित नहीं होती है। संवेग (Emotion) दमन (repression) भूलने की इच्छा या भूताभिमुख (retroactive inhibition) हमारे प्रत्यावाहन को रोकते हैं। प्रत्यावाहन कभी पूर्ण होता है और कभी अपूर्ण।

प्रत्यभिज्ञा (Recognition) प्रत्यभिज्ञा वह प्रक्रिया है जिस

के द्वारा हम यह जानने में समर्थ होते हैं कि प्रत्यावाहित घटना या अनुभव हमारे अतीत से संबंध रखता है जिसका अनुभव हमें गत में अमुक स्थान और अमुक समय में हुआ था। इसके द्वारा याद अनुभवी हमें परिचित प्रतीत होता है। जबतक प्रत्यभिज्ञा की क्रिया न हो तबतक स्मृति प्रक्रिया अधूरी रहती है। यही प्रक्रिया ऐसी है जिसके द्वारा हम अपनी स्मृति पर विश्वास करते है। प्रत्यभिज्ञा कभी तो निश्चित होती है और कभी अनिश्चित। अनिश्चित प्रत्यभिज्ञा वह है जिसके द्वारा हम स्मृति विषय के संबंध मे केवल इतना पहचान वा जान पाते हैं कि इसका अनुभव हमें भूतकाल में हुआ था, लेकिन कहाँ और किस समय हुआ था इसका ज्ञान नहीं होता। निश्चित प्रत्यभिज्ञा में काल और स्थान का भी ज्ञान रहता है। कभी-कभी भ्रमवश हमें झूठी प्रत्यभिज्ञा भी होती है। जब हम पहले पहल किसी अपरिचित स्थान मे जाते हैं तो हमें ऐसा मालूम होता है कि इस स्थान का अनुभव हमे गत में हो चुका है, किंतु वस्तुतः ऐसी बात नहीं रहती। यह झूठी प्रत्यभिज्ञा कई कारणों से होती है जिनका उल्लेख यहाँ करना आवश्यक नहीं है।

Q. 70 Distinguish between recall and recognition. Can you say that what can not be recalled is not retained by the mind.? Give reasons for your answer. (1947 A.)

पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ४६, १६४४ A देखें।

जिस अनुभव का प्रत्यावाहन (recall) नहीं होता उसकी धारणा भी नहीं रहती, यह कहना अनुचित है। क्योंकि यद्यपि प्रत्यावाहन धारणा पर ही निर्भर करता है, लेकिन उसका यह मतलब नहीं कि जिसे हम याद न कर सकें वह धारणा भी नहीं है। हमारे भय, क्रोध इत्यादि के संवेग धारणा की हुई बातों को भी याद नहीं करने देते। क्रोध की अवस्था में हमें बहुत सी बातें भूल जाती हैं। परीक्षा के भय से सीखी हुई बातें भी परीक्षा भवन में याद नहीं होतीं। कभी-कभी ऐसा होता है कि जिस चीज को हम भूलना चाहते हैं उसे भी याद करने में असमर्थ हो जाते हैं। हमारे अपमानजनक अनुभव दमन (repression) के द्वारा अचेतन मन में कर दिये जाते हैं, जो हमारी चेतना में सामान्य अवस्था में नहीं आते। जब कई अनुभव एक ही साथ चेतना में आने की कोशिश करते हैं तो विशेष अनुभव जिसे हम याद करना चाहते हैं वह भी याद नहीं होता है। कभी-कभी उन घटनाओं को हम प्रत्यावाहित करने में भी असमर्थ होते है जिनका सम्बन्ध किसी दुःखद घटना से रहता है। हमारे वर्तमान अनुभव भी गत अनुभवों को जबर्दस्ती हमारे अचेतन मन में ढकेल देते हैं। इस कारण हम किसी गत अनुभव को याद करने मे असमर्थ होते है। जब अपने माता-पिता का एकमात्र पुत्र कालेज में पढ़ने के लिये चला जाता है तो अपने माता पिता को पत्र लिखना भी भूल जाता है। इसका यह भूलना कालेज के, वर्तमान और आवश्यक कार्यों के

कारण ही होता है। इससे यह नहीं समझ लेना चाहिए कि उसके मन में अपने माता पिता के विचार ही नहीं हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि बहुत सी बातें हमारे मन मे रहती है, लेकिन हम उनको स्मरण नहीं कर सकते। अतएव प्रत्यावाहन की असफलता धारणा की असफलता का द्योतक नहीं है।

Q. 71 State and illustrate the various laws of association. (1947 S.)

पुरानी बातों वा पुराने अनुभवों को याद करना उनके पारस्परिक सम्बन्ध पर निर्भर करता है। हमे सभी गत अनुभव याद नहीं होते, बल्कि खास-खास अनुभव ही याद होते हैं। यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि क्यों एक चीज याद होती है, दूसरी चीज नहीं ? इसके उत्तरस्वरूप हम यही कह सकते हैं कि जब दो चीजो मे पारस्परिक संबन्ध होता है और उनमें से यदि एक को याद आती है तो दूसरी भी हमे याद हो जाती है। एक अनुभव का स्मरण दूसरे अनुभव का स्मरण साहचर्य्य नियम (law of association) के आधार पर दिलाता है। साहचर्य का वास्तविक अर्थ पारस्परिक संबंध है। यह संबन्ध तीन प्रकार का होता है, सन्निकटता का संबन्ध (Contiguity) विरोध का संबंध Contrast) और समानता (Similarity) का सबंध। ये संबन्ध जिस नियम के आधार पर संस्थापित होते है उन्हें साहचर्य नियम (laws of association) कहते हैं। इस तरह तीन प्रकार के साहचर्य्य नियम होते हैं। वे ये हैं सन्निकटता

का नियम (law of contiguity), विरोध का नियम (law of contrast) और समानता का नियम (law of similarity)।

सन्निकटता का नियम (law of contiguity) इस नियम के अनुसार जब हम दो चीजों का अनुभव एक जगह करते हैं तो एक की याद दूसरे की याद दिलाती है। सन्निकटता दो प्रकार की होती है। समय की सन्निकटता और स्थान की सन्निकटता। जब हम दो चीजों का अनुभव एक समय में करते हैं तो उनमें समय की सन्निकटता होती है। जब हम दो चीजों का अनुभव किसी खास स्थान वा इसके अगल-बगल में करते हैं तो उसमे स्थान की सन्निकटता होती है। यदि हम बगीचे और तालाब को साथ-साथ देखते हैं तो बगीचा हमें तालाब का स्मरण स्थान सन्निकटता के कारण दिलाता है। यदि हम मोहन और सोहन को नित्य प्रति ४ बजे शाम को साथ-साथ देखते हैं तो मोहन का स्मरण सोहन की याद दिलायेगा। सन्निकटता का साहचर्य्य नियम बहुत ही प्रमुख नियम है।

विरोध का नियम (law of contrast) इस नियम के अनुसार दो विधर्म्मी वस्तुएँ एक दूसरे की याद दिलाती हैं। जब हम दिन का अनुभव करते हैं तो रात भी स्मरण हो आती है, क्योंकि दिन और रात एक दूसरे के विरोधी हैं। जब हमारे विपत्ति के दिन आते हैं तो हमें सुखमय दिन भी याद आ जाते है। जब हमे किसी दुर्जन से पाला पड़ता है तो हमें सज्जन

व्यक्ति की याद आ जाती है, राम-रावण, प्रह्लाद-हिरण्यकश्यप, या धनी-दरिद्र की याद दिलाता है।

इसी प्रकार हमें एक विचार अपने विरोधी विचार की याद दिलाता है। इस सम्बन्ध में इस बात को ध्यान में रखना आवश्यक है कि कुछ मनोवैज्ञानिक इसे एक स्वतंत्र नियम नहीं मानते। उनका कहना है कि इस नियम की सत्ता स्वतंत्र नहीं है, बल्कि यह समानता नियम के ही अन्तर्गत है।

समानता का नियम (Law of similarity)—इस नियम के अनुसार एक चीज अपने ही समान दूसरी चीज की याद दिलाती है। हमें राम, कृष्ण की याद दिलाते हैं। एक तेज विद्यार्थी दूसरे तेज विद्यार्थी की याद दिलाता है। कुमुदिनी भारतीय कवियों को प्रेमिका के मुख मण्डल की याद दिलाती है। जब हम तुलसीदास को याद करते हैं तो सूरदास की भी याद आ जाती है, क्योंकि दोनों ही हिन्दी के महान् कवि हैं। कलकत्ता नगर की याद बम्बे की याद दिलाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि दो चीजों में किसी तरह की समानता रहती है तो एक का स्मरण दूसरे के स्मरण का कारण होता है। जब हम महात्मा गांधी के फोटो को देखते हैं तो पूज्यवर महात्मा गांधी की याद आ जाती है।

यों तो साहचर्य के ये ही नियम हैं, किंतु सभी मनोवैज्ञानिक इस मत से सहमत नहीं हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार सन्निकटता का नियम ही प्रधान नियम है और अवशेष दो नियम

इल्ली के अन्तर्गत हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कुछ मनोवैज्ञानिक सञ्चालता एवं विरोध नियम को भी एक दूसरे से स्वतंत्र नहीं मानते। जो कुछ भी हो, हमें इतना तो अवश्य ही मानना पड़ेगा कि जीवन की सभी घटनाओं को हम इन्हीं नियमों के प्रसाद से याद करते हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि ये नियम भी गौण (secondary) नियमों से प्रभावित होते हैं। परन्तु यहां हम उन गौण नियमों का उल्लेख नहीं करेंगे।

Q. 72 Explain the nature and causes of forgetting with examples. (1948 A.)

जब किसी अतीत घटना या अनुभव का प्रत्यावाहन नहीं होता है तो हमलोग कहते हैं कि हमें अमुक घटना विस्मृत हो गयी है, अतएव स्मरण करने की असफलता को भूलना कहते हैं। किन्तु इसका यह मतलब नहीं कि जिसे हम स्मरण न कर सके वह हमारे मन में नहीं है। धारण तो हम बहुत सी चीजों को करते हैं, किंतु कई कारणों से उनका प्रत्यावाहन नहीं होता। प्राचीन काल में मनोवैज्ञानिकों का यह खयाल था कि विस्मृति (Forgetting) निष्क्रिय (passive) है। अर्थात् यदि किसी चीज को याद किया जाये तो समय के व्यवधान से वह चीज भूल जाती है, परन्तु वर्त्तमान काल में प्रयोग (Experiment) द्वारा यह प्रमाणित कर दिया गया है कि बहुत सी चीजें हमलोगों को समय के व्यवधान से नहीं भूलतीं, बल्कि अन्य कारणों से भूलती हैं। अतएव उनके अनुसार विस्मृति सक्रिय (Active)

है। किन्तु हमलोगों के दृष्टिकोण से विस्मृति सक्रिय एवं निष्क्रिय दोनों ही है। क्योंकि बहुत सी चीजें तो पुरानी हो जाने से भूल जाती है और बहुत सी चीजें मन के द्वारा भुला दी जाती है।

विस्मृति के कारणों पर विचार करते हुए हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि रुचि (Interest) भूलने का एक प्रधान कारण है। जिस चीज में हमारी रुचि रहती है उसे हम नहीं भूलते। किन्तु जिस चीज मे रुचि नहीं रहती है उसे हम भूल जाते हैं। प्रायः हमलोग देखते हैं कि एक ही विद्यार्थी ऐतिहासिक घटनाओं को बहुत अच्छी तरह याद रखता है, किन्तु गणित के सूत्रों (Formulae) को वह भूल जाता है। क्योंकि उसकी रुचि गणित में नहीं रहती है। हमारे जीवन मे बहुत सी घटनायें नित्यप्रति घटती हैं, लेकिन उनमें से हमें वही याद रहती है जिसमें हमारी रुचि रहती है। अगर हम ऐसे विषयों को याद करते हैं जो हमारे जीवन के लिये सार्थक होते है तो वे विषय हमें नहीं भूलते है। किंतु जो अनुभव के विषय निरर्थक होते हैं वे भूल जाते हैं। यदि हम ऐसी चीजों का अनुभव करें जो हमारे लिये निरर्थक हैं तो उन चीजों को हम भूल जाते हैं। इसलिये देखा जाता है कि कालेज में पढ़ाई हुयी उन चीजों को विद्यार्थी शीघ्र ही भूल जाते हैं जो उन्हें निरर्थक मालूम होती हैं।

अगर हम किसी चीज को याद करने के बाद ही तुरत दूसरी चीज याद करते हैं तो हमें पहली याद की हुयी चीज भूल जाती

है। क्योंकि बाद को याद की हुई चीज पहली याद की हुई चीज को अचेतन मन में कर देती है। यदि हम इतिहास पढ़ने के बाद तुरत भूगोल पढ़ें तो इन दोनों विषयों की घटनाओं में इस तरह का सम्मिश्रण हो जाता है कि हमें कुछ भी याद नहीं रहता। अतएव भूताभिमुख (retroactive-inhibition) भी भूलने का प्रधान कारण है।

यदि हम किसी चीज को याद करें और उसे बहुत दिन तक न दोहरावें तो वह चीज भूल जाती है। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने प्रयोग द्वारा यह सिद्ध किया है कि सोने से भी विस्मृति होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि समय का व्यवधान और पुनरावृत्ति के अभाव भी भूलने में सहायक होते हैं।

मस्तिष्क में किसी तरह की क्षति हो जाने पर भी हम किसी चीज को याद करने में असमर्थ हो जाते है। क्रोध और भय के संवेग की अवस्था में भी हम जिस चीज को याद करना चाहते हैं वह भूल जाती है।

फ्रायड (Freud) ने इस बात को प्रमाणित कर दिया है कि स्वाभिमान के प्रतिकूल अनुभव और घटनाओं को हमलोग दमन (repression) के कारण भूल जाते हैं। यदि कोई घटना हमें दुःखद प्रतीत होती है तो भी उसे हमलोग दमन के कारण भूल जाते हैं।

प्रयोग करके देखा गया कि भाँग, गाँजा तथा अन्य मादक द्रव्यों के सेवन से भी विस्मृति होती है। नशे की हालत में

प्राय: ऐसा देखने में आता है कि हमलोग सभी कुछ भूल जाते हैं।

मानसिक बीमारियाँ भी भूलने का कारण होती हैं। कई-एक ऐसी बीमारियाँ हैं जिनमे मनुष्य अपने नाम और गोत्र तक भूल जाता है।

भूलने के उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त-और भी कई कारण हैं जिनका संबंध असाधारण-मनोविज्ञान (Abnormal Psycholgy) से है। अतएव उनका उल्लेख हम यहाँ नहीं करेंगे। फ्रायड (Freud) ने उन कारणों पर "साइको-पैथोलौजी आफ एभरी डे लाइफ" (Psychopafhology of every day life) नामक पुस्तक में बहुत अच्छी तरह से प्रकाश डाला है।

Q. 73 —Describe the Processes of retention, recall and recognition in remembering an event (1948 S)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ५३ देखे।

Memory and Forgetting.

Q. 74. How is past experience retained in the mind ? Is frequent repetition necessary for retaining and recalling all instances of past experience ? (1949 A.)

इस प्रश्न के पहले भाग का उत्तर देने के लिये यह ध्यान में

रखना आवश्यक है कि धारणा (Retention) के सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिकों में मतभेद है। अतः इस सम्बन्ध में दो सिद्धान्त प्रचलित हैं।

जेम्स इत्यादि मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि जब कोई अनुभव समाप्त होने लगता है तब वह अपना संस्कार मस्तिष्क के अंचल विशेष में छोड़ जाता है जहाँ वह सुरक्षित रहता है। कोई भी अनुभव चेतना से अलग रहकर मन में नहीं रह सकता। धारणा का सम्बन्ध मन से बिलकुल नहीं है, बल्कि मस्तिष्क से है। इस विचार के आधार पर हम यही कह सकते है कि जब कोई अनुभव मन की चेतनावस्था से विलीन हो जाता है तब उसका संशोधित संस्कार मात्र ही मस्तिष्क के किसी भाग में मौजूद रहता है जो काम पड़ने पर पुनः चेतना में आता है। परन्तु यदि हम इस विचार धारा पर विचार करें तब मालूम होगा कि धारणा का यह सिद्धान्त पूर्णतः अमान्य है; क्योंकि इसके अनुसार अनुभव विनष्ट होकर पुनः आविर्भूत होते हैं। अर्थात् जिसकी सत्ता ही नष्ट हो जाती है उसका पुनः आविर्भाव होता है जो बिलकुल निरर्थक मालूम पड़ता है। फिर भी इस सिद्धान्त के अनुसार विभिन्न प्रकार के अनुभवों के लिये मस्तिष्क के विभिन्न अंचलों की आवश्यकता पड़ती है, परन्तु मस्तिष्क अंचल सीमित होने के कारण ऐसा असंभव है। इसके अतिरिक्त भी स्मृति प्रक्रिया मानसिक है और इसकी व्याख्या भी मानसिक हो होनी चाहिये जो इस सिद्धान्त में नहीं है। इसी तरह इस

सिद्धान्त में और भी कई त्रुटियाँ हैं। अतः धारणा का यह सिद्धान्त हमलोगों को मान्य नहीं है।

दूसरे पक्ष के मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि जब कोई अनुभव समाप्त होने लगता है तब वह अपना संशोधित संस्कार अचेतनावस्था में छोड़ जाता है और पुनः वही चेतनावस्था में आता है। यहाँ यह स्मरणीय है कि वह संस्कार पूर्णतः अचेतन नहीं हो जाता, बल्कि उसमें चेतना की शक्ति विद्यमान रहती है और चेतना में चला आता है। इस पक्ष में बहुत से प्रयोगात्मक प्रमाण भी मौजूद हैं।

अब दूसरे प्रश्न को क्या धारणा और प्रत्यावाहन के लिये पुनरावृत्ति आवश्यक है यही कहा जा सकता है कि किसी अनुभव को धारण करने के लिये पुनरावृत्ति (Frequent repetition) आवश्यक है; क्योंकि इससे संस्कारों की दृढ़ता बढ़ती है। परन्तु पुनरावृत्ति पर ही धारणा और प्रत्यावाहन पूर्णतः निर्भर नहीं करते, बल्कि इसके साथ-साथ अन्य अंग भी आवश्यक हैं।

हम किसी अनुभव को धारण और प्रत्यावाहन कर सकें इसके लिये आवश्यक है कि अभ्यास करते समय ऐसा करने की हममें रुचि और इच्छा हो। रुचि और इच्छा के बिना पुनरावृत्ति सार्थक सिद्ध नहीं होती।

शारीरिक और मानसिक स्वस्थता भी इन दोनों प्रक्रियाओं के लिये आवश्यक है। बार-बार दुहराने पर भी अस्वस्थता के कारण कुछ धारण नहीं होता और इसलिये स्मरण भी नहीं होता।

जिस अनुभव को बार-बार दुहराया जाय उसको समझ बूझकर दोहराना चाहिये। बिना समझे बूझे धारणा क्षणिक काल के लिये ही होती है। इसलिये उसका प्रत्यावाहन भी नहीं होता है।

जिस अनुभव को दुहरावें उसको सार्थक बना दें और उसका सम्बन्ध जीवन से बना दें तब वह अच्छी तरह धारणा भी हो सकता है और प्रत्यावाहित भी।

इस प्रकार हम देखते है कि किसी अनुभव को धारणा और प्रत्यावाहन करने के लिये दुहराने के साथ-साथ उपर्युक्त अंग भी आवश्यक हैं, अकेले बार-बार दुहराना ही पर्याप्त नहीं है।

Q. 75. Discuss the Causes of forgetting. (1949 S)

-इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ७२ का उत्तर पढ़िये।

Q. 76. Describe the laws of Association, with examples. (1950 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ७१ का उत्तर देखें।

CHAPTER 8.

IMAGINATION

Q. 77- Distinguish between percept and image with concrete examples. (1944 S)

जिस पदार्थ का हमें प्रत्यक्षीकरण होता है उसे प्रत्यक्ष (Percept) कहते हैं और जो पदार्थ हमारी इन्द्रियों के सामने विद्यमान नहीं रहता है, लेकिन स्मृति के आधार पर उसका हमें

अपने मानस पटल पर चित्र खींचते हैं तो उसे प्रतिमा (Image) कहते हैं। यदि हम इन दोनों के अन्तरो पर विचार करें तो हमें मालूम होगा कि प्रत्यक्ष हमारी किसी इन्द्रिय के सामने उपस्थित रहता है, लेकिन प्रतिमा हम प्रत्यक्ष पदार्थ की नहीं खींचते है, बल्कि हमारे मानस पटल पर अनुपस्थित पदार्थ की ही प्रतिमा होती है।

प्रत्यक्ष, प्रबल और पूर्ण (Intense and Perfect) होता है, लेकिन प्रतिमा प्रत्यक्ष की अपेक्षा निर्बल और अधूरी होती है। मान लीजिए हम किसी कुत्ते को देख रहे हैं, देखते समय कुत्ता का प्रत्येक अवयव दृष्टि गोचर होता है, लेकिन जब कुत्ता हमारे सामने उपस्थित नहीं है और केवल उसकी प्रतिमा मात्र हमारे मन मे है तो वह बहुत ही धुँधली और अधूरी होगी। संभव है हम कुत्ते के प्रत्येक पहलू की प्रतिमा का अनुभव न कर सके।

प्रत्यक्ष का सम्बन्ध वाह्य विश्व से रहता है, किंतु प्रतिमा का सम्बन्ध आन्तरिक विश्व से रहता है, इसलिये हम प्रत्यक्ष को विधेयात्मक और प्रतिमा को आत्मगत (Subjective) कह सकते है, जब हम किसी फूल को देखते है तो उस समय उस फूल की सत्ता (Existence) संसार के किसी स्थल पर होती है, लेकिन जब हम इसी पुष्प की स्मृति प्रतिमा (Memory image) का अनुभव करते हैं तो वह बाहरी संसार में नहीं रहती, बल्कि हमारे मानस पटल पर रहती है।

प्रत्यक्ष, हमारी इच्छा पर निर्भर नहीं करता, लेकिन प्रतिमा

हमारी इच्छा पर निर्भर करती है। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि हमारी इन्द्रियों में दोष नहीं है तो प्रत्यक्ष इच्छा न रहते हुए भी होता रहता है, लेकिन प्रतिमा का आवाहन तो हम अपनी इच्छानुसार करते है। यदि कहीं गाना हो रहा हो तो हम चाहें या न चाहें वह हमें अवश्य ही सुनाई देगा, लेकिन सुने हुए गाने की प्रतिमा तो इच्छा करने पर ही हो सकती है।

प्रत्यक्ष हमारी गति से प्रभावित होता है, लेकिन गति का प्रभाव प्रतिमा पर नहीं पड़ता। यदि हम किसी चीज को देख रहे हों और वहाँ से हट जायँ तो वह चीज भी हमारी आँखों से ओझल हो जाती है, परन्तु जहाँ कहीं भी जायँ किसी पदार्थ विशेष की प्रतिमा हमारे मानस पटल पर बनी रह सकती है।

प्रत्यक्ष स्पष्ट (Distinct) होता है, लेकिन प्रतिमा धुंधली होती है। प्रत्यक्ष हमारी इन्द्रिय के सामने रहता है इसलिए उसका स्पष्ट (Clear) होना स्वाभाविक है, लेकिन प्रतिमा अनुपस्थित चीज की होती है, इसलिए उसका धुँधला होना अनिवार्य है।

प्रत्यक्ष के समय हमारा ध्यान बाहर की ओर रहता है, लेकिन प्रतिमा में हमारा ध्यान भीतर की ओर रहता है। जब हम कोई गाना सुनते है तो उस समय हमारा ध्यान बाहर की ओर रहता है; परन्तु जब हम ध्वनि कल्पना करते हैं तो हमारा ध्यान उस मानस प्रतिमा की ओर रहता है।

प्रत्यक्ष के पदार्थ का अनुभव हम जबतक चाहते हैं करते

रहते हैं, परंतु प्रतिमा का अनुभव जब चाहें तब नहीं कर सकते, क्योंकि बहुत अंशों में मानसिक प्रतिमा मानसिक अवस्था तथा अन्य बातों पर निर्भर करती है।

प्रत्यक्ष का प्रभाव हम पर विशेष रूप से पड़ता है, किंतु प्रतिमा का प्रभाव उतना नहीं पड़ता। जब हम किसी सुन्दर चीज को देखते है तो उसे तोड़ने की इच्छा होती है या जब दुर्गन्ध का अनुभव होता है तो हम वहां से दूर हट जाते हैं, परन्तु प्रतिमा के समय प्रायः ऐसा नहीं होता है।

Q. 78 Describe with examples the different types of imagery (1945 A.)

प्रतिमा या कल्पना (Imagery) के प्रकार का वर्णन करने के पहले यह व्यक्त कर देना आवश्यक है कि प्रायः सभी मनुष्यों में प्रतिमा शक्ति मौजूद रहती है, लेकिन उनके प्रकार में व्यक्तिगत भेद होता है। जैसा कि हमलोग जानते है अतीत अनुभव के आधार पर वर्तमान मे उस अनुभव का स्मृति द्वारा मानस पटल पर चित्र खींचने को ही प्रतिमा कहते हैं। जिस प्रकार स्मृति में व्यक्तिगत भेद होता है उसी प्रकार प्रतिमाशक्ति में भी व्यक्तिगत भेद होता है। जिस प्रकार की प्रतिमा की शक्ति किसी मनुष्य में सबसे अधिक रहती है उसी के आधार पर पुकारते हैं। यदि किसी व्यक्ति मे दृष्टि-प्रतिमा की शक्ति सब से अधिक रहती है तो उसे दृष्टि प्रतिमा प्रधान व्यक्ति (Visiles) कहते हैं। यहां हम उन विभिन्न प्रकारों का संक्षिप्त परिचय देंगे।

दृष्टि-प्रतिमा (Visual imagery)—जिस व्यक्ति में दृष्टि प्रतिमा या कल्पना की प्रधानता होती है वह देखी हुई चीजों की कल्पना अन्य पदार्थों की अपेक्षा अच्छी तरह से करता है। जिसमें इस कल्पना की प्रधानता रहती है उसे दृष्टिप्रतिमाप्रधान व्यक्ति कहते हैं।

ध्वनि प्रतिमा (Auditory imagery) बहुत से व्यक्तियों मे दृष्टि प्रतिमा की नहीं, बल्कि ध्वनि प्रतिमा की विशेषता रहती है। इस प्रकार का व्यक्ति जिस खूबी के साथ सुनी हुई बातों की कल्पना कर सकता है उस प्रकार अन्य प्रकार के अनुभवों की नहीं। जिसमें ध्वनि कल्पना की शक्ति अधिक मात्रा मे विद्यमान रहती है उसे ध्वनि-प्रतिमा प्रधान व्यक्ति कहते हैं।

स्पर्श कल्पना (Tactile imagery) कुछ व्यक्ति ऐसे होते हैं जिनमे दृष्टि प्रतिमा या ध्वनि प्रतिमा की शक्ति बहुत ही कम मात्रा में होती है, लेकिन उनमे स्पर्श प्रतिमा की शक्ति का बाहुल्य रहता है। ऐसे व्यक्ति को स्पर्श-प्रतिमा-प्रधान व्यक्ति कहते है।

घ्राण कल्पना (Olfactory imagery) जिस प्रकार मनुष्यो में अन्य प्रतिमाओ के लिए शक्ति विद्यमान रहती है उसी प्रकार उनमे घ्राण कल्पना की भी शक्ति विद्यमान रहती है। पर-जु जिस व्यक्ति में अन्य कल्पनाओ की शक्ति से इस प्रकार की शक्ति विशेष रूप से रहती है उसे घ्राण-कल्पना-प्रधान व्यक्ति कहते है।

रस प्रतिमा (Gustatory imagery) जिस व्यक्ति में किसी पदार्थ के स्वाद की कल्पना करने की विशेष शक्ति रहती है

उसे रस-प्रतिमा-प्रधान व्यक्ति कहते है। रस प्रतिमा की शक्ति या योग्यता यों तो सभी मनुष्यों में रहती है, परन्तु अन्य प्रतिमाओं की अपेक्षा इसकी विशेष योग्यता बहुत ही कम लोगों मे पाई जाती है।

क्रियाकल्पना (Motor imagery)—जब कोई आदमी अपनी किसी क्रिया की कल्पना करने मे अधिक प्रवीण होता है तो उसे क्रियाकल्पना-प्रधान व्यक्ति कहते है। इस कल्पना की विशेष शक्ति बहुत ही कम लोगो मे पाई जाती है।

इस प्रकार हम देखते है कि जितनी इन्द्रियाँ है उतने प्रकार की प्रतिमाएँ होती हैं। कुछ मनोवैज्ञानिको ने मनुष्य का विभाजन प्रतिमाओं के ही आधार पर किया है परन्तु यह विभाजन संतोषप्रद प्रतीत नहीं होता। प्रायः ऐसा देखने में आता है कि सभी प्रकार की प्रतिमाओ की योग्यता सभी मनुष्यों में पाई जाती है, इसलिए प्रतिमा के आधार पर व्यक्तियो का विभाजन ठीक नहीं है।

हाँ, यहाँ यह ध्यान मे रखना आवश्यक है कि प्रतिमा प्राधान्य की जाँच के लिए हमलोग प्रश्नमाला पद्धति के द्वारा पता लगा सकते है कि किस मनुष्य मे किस प्रकार की प्रतिमा के लिए विशेष शक्ति मौजूद है। इस पद्धति के अतिरिक्त और भी कई पद्धतियाँ हैं, लेकिन सभी के आधार अन्तर्दर्शन और विषयी के अनुभव ही हैं। कभी-कभी सूचना मे अत्योक्ति होने के कारण हमलोगों का निर्णय दोष पूर्ण हो जाता है।

Q. 79 Point out the distinction between an image and a percept. Explain recognition. (1945 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ५८, १६४४ S. और प्रश्न नम्बर ५०, १६४६ S. देखें।

Q. 80 Distinguish between percept and image by the help of examples (1946 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६०, १६४५ S. देखें।

Q. 81 What is meant by perception ? How does a percept differ from an image ? (1947 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ३१ सन् १६४५ S. और प्रश्न नम्बर ६१, १६४६ S. देखें।

Q. 82 Distinguish between a percept and an image What do you mean by image type ? (1948 A)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६१, १६४६ S. और प्रश्न नम्बर ५६ सन् १६४५ A. देखें।

Q. 83 What is imagination ? Explain and illustrate its different forms.

जब हम अपने व्यतीत अनुभव के आधार पर किसी नवीन मानसचित्र को अंकित करते हैं तो उसे कल्पना कहते हैं। कल्पना का आधार हमारा व्यतीत अनुभव (Past experience) ही

रहता है. किंतु उसी अनुभव को हमलोग एक नए ढाँचे में ढाल देते हैं। हमें आदमी, सोना, और हाथी का अनुभव रहता है और हम इन्हीं अनुभवों को एक नया रूप देकर हाथी के शरीर वाला, सोना का बना हुआ आदमी की कल्पना करते हैं। यद्यपि कल्पना अनुभूत पदार्थों की नहीं होती, लेकिन उन अनुभवों का इसमें कायाकल्प हो जाता है। जिस प्रकार स्मृति मे गत अनुभव काम करता है उसी प्रकार कल्पना से भी। परन्तु स्मृति मे हमे परिचितत्व (Familiarity) की भावना रहती है, किंतु कल्पना मे नहीं। स्मृति का सम्बंध वास्तविकता से रहता है, लेकिन कल्पना का नहीं। इतना ही नहीं, बल्कि स्मृति नियंत्रित होती है, किंतु कल्पना प्रायः अनियंत्रित होती है। हम थोड़े शब्दों मे यह कह सकते हैं कि कल्पना वह मानसिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी प्रकार का चित्र हम अपने मानस पटल पर खीचते हैं।

कल्पना के प्रकारों पर विचार करते हुए यह ध्यान मे रखना जरूरी है कि हम कल्पना को विभिन्न दृष्टिकोणों से विभिन्न वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। परन्तु यहाँ हम प्रमुख प्रकारों का वर्णन करेंगे।

सक्रिय कल्पना (Active imagination) में हम इच्छा पूर्वक अपने व्यतीत अनुभवों के आधार पर एक नया मानस चित्र तैयार करते हैं। हमारा मन इस प्रकार की कल्पना में सक्रिय रहता है और आवश्यकतानुसार गत अनुभवों को चुनता

है और पुनः उन्हीं को एक नया रूप देता है। जब हमलोग किसी कहानी अथवा लेख को लिखते हैं तो उस समय सक्रिय कल्पना काम करती है। जब कोई कारीगर किसी भवन के निर्माण के लिए नक्शा तैयार करता है तो उस समय भी हमारी कल्पना सक्रिय रहती है। प्रायः सभी वैज्ञानिक अन्वेषण सक्रिय कल्पना के ही प्रसाद स्वरूप होते हैं।

निष्क्रिय कल्पना (Passive Imagination) में हमारा मन सक्रिय कल्पना की अपेक्षा निष्क्रिय रहता है। ऐसी कल्पना में हमारा मन इच्छा पूर्वक किसी कल्पना का निर्माण नहीं करता है, बल्कि कल्पनाएँ स्वतः मानस पटल पर आती रहती हैं। ऐसी कल्पनाओं से हमारे व्यावहारिक जीवन मे किसी प्रकार का लाभ नहीं होता है, परन्तु इनसे किसी प्रकार की अतृप्त इच्छा की पूर्ति अवश्य होती है। जब कोई व्यक्ति दरिद्रता से ऊब जाता है तो वह कभी-कभी राजा होने की कल्पना करता है। यह कल्पना स्वतः उसके मानस पटल पर सूचन-शक्ति (Suggestive-force) के द्वारा आविर्भूत हो जाती है। इसके लिए उसे किसी प्रकार की चेष्टा करने की जरूरत नहीं पड़ती। दिवा स्वप्न (Day dreaming) और मनोराज्य (Autistic thinking) निष्क्रिय कल्पना के उपयुक्त उदाहरण हैं।

पुनरावृत्त्यात्मक कल्पना (Reproductive imagination) में हम अनुभूत घटनाओं तथा पदार्थों की कल्पना करते हैं। जब हम शकुन्तला या और किसी उपन्यास अथवा कहानी को

पढ़कर वर्णित घटनाओं की कल्पना करते हैं तो इस प्रकार की कल्पना का उदाहरण हमें मिलता है।

रचनात्मक कल्पना (Creative imagination) में यद्यपि हमारे गत अनुभव काम करते हैं, परन्तु हमलोग उन अनुभवों को एक नया रंग दे देते हैं। उपन्यासकार या लेखक और इंजीनियर आदि रचनात्मक कल्पनाओं का आश्रय लेते हैं। इस प्रकार की कल्पना नवीनता से परिपूर्ण रहती है। इन कल्पनाओं के अतिरिक्त और प्रकार की भी कल्पनाएँ होती हैं, लेकिन हम यहाँ उनका वर्णन नहीं करेंगे।

Imagination.

Q 81. What is an image, and how does it arise? Distinguish between the different kinds of images.

जब किसी गत घटना अथवा अनुभव का चित्र हमारे मानस पटल पर आता है तब उसी मानस चित्र को प्रतिमा (Image) कहते हैं। मान लें हम इस समय कोई सुन्दर गाना सुन रहे हैं, किन्तु जब गाना समाप्त हो जाता है तब भी ध्वनि की प्रतिमा हमारे मानस-पटल पर विद्यमान रहती है, यही Image है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि जब किसी अनुपस्थित उत्तेजना का अनुभव हम अपने मन में करते हैं तब उसी अनुभव को प्रतिमा (Image) कहते हैं। यहाँ हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि जिसका हम भूत में अनुभव किये रहते हैं उसी की स्मृति प्रतिमा भी होती है। बिना अनुभव के प्रतिमा असंभव है।

इसके आविर्भाव के सम्बन्ध में हम यही कह सकते हैं कि जब कोई उत्तेजना समाप्त होने लगती है तब वह अपना संस्कार हमारे मन पर अचेतनावस्था में छोड़ जाती है। वे संस्कार बराबर चेतना में आने की कोशिश करते रहते हैं और अवसर मिलने पर पुनः मानस पटल पर स्मृति प्रतिमा के रूप मे आविर्भूत होते हैं। स्मृति प्रतिमा के लिये किसी उत्तेजना, संकेत अथवा संसूचन की आवश्यकता पड़ती है। हम आज से कई वर्ष पहले विश्वनाथ मन्दिर देखे हुये हैं और आज कोई समुचित उत्तेजना हमे मिल जाती है और हम उसकी स्मृति प्रतिमा का अनुभव करते हैं।

इस प्रश्न के दूसरे भाग के लिये प्रश्न नम्बर ७८ का उत्तर पढ़िये।

Q. 85 What is imagination ? Describe the forms of imagination. (1950 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ८३ का उत्तर पढ़िये।

CHAPTER 9

THINKING

Q. 86 Distinguish between thinking and remembering. It is better to remember by whole method or by part methcd ? (1944 S)

चिंतन (Thinking) और स्मृति (Remembering) दोनों ही मानसिक क्रियाएँ हैं, किंतु चिंतन एक उच्चतर Higher)

मानसिक प्रक्रिया है, लेकिन स्मृति उस कोटि की प्रक्रिया नहीं है। चिंतन में स्मृति भी जटित (Involved) रहती है, किंतु स्मृति में चिंतन प्रक्रिया नहीं रहती है। कहने का अभिप्राय यह है कि चिंतन में हम किसी उपस्थित समस्या (Problem) को हल करते हैं, लेकिन स्मृति में हम अपने गत अनुभवों को वर्त्तमान में अपनी चेतना में लाते हैं। यद्यपि इन दोनों में हमारा गत अनुभव काम करता है, लेकिन एक में हम किसी समस्या को उन अनुभवों के आधार पर सुलझाते हैं और दूसरे मे हम उन्हीं अनुभवों का प्रत्यावाहन करते हैं। चिंतन के समय भूत घटनाओं और अनुभवों को स्मरण करके उन्हें किसी ध्येय की प्राप्ति के लिए एक नए संघात में लाते है, परन्तु स्मृति में गत अनुभवों को ज्यों का त्यों याद करते हैं। चिंतन में तुलना (Comparison) समीकरण (Assimilation) आदि की कई क्रियाएँ होती हैं, लेकिन स्मृति में ये क्रियाएँ नहीं होती हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि यद्यपि ये दोनों मानसिक क्रियाएँ हैं, तथापि इन दोनों में अन्तर है, क्योंकि दोनों के काम अलग-अलग हैं।

अब दूसरे भाग का उत्तर देने के लिए यह ध्यान मे रखना आवश्यक है कि मनोवैज्ञानिकों मे इस सम्बन्ध मे मतभेद है। कुछ लोगों का कहना है कि किसी कविता या पाठ को पूरी रीति (Whole method) से याद करना अच्छा है और कुछ लोगों का सिद्धान्त पूर्णतः इसके प्रतिकूल है। उनका कहना है कि

हमें किसी कविता या पाठ को आंशिक रीति (Part method) से याद करना चाहिए। दोनों पक्ष के मनोवैज्ञानिकों ने प्रयोगात्मक उदाहरण से अपने सिद्धान्त को पुष्ट करने की कोशिश की है। लेकिन सच्ची बात तो यह है कि न तो हमें किसी चीज को पूर्ण रीति से ही याद करने की कोशिश करनी चाहिए और न आंशिक रीति से। याद करने की रीति की सफलता याद करने वाले पाठ की लम्बाई और उसकी कठिनाई पर निर्भर करती है। यदि हम जिस कविता को याद करना चाहते हैं वह बहुत ही छोटी है तो उस कविता को पूर्ण रीति से ही याद करना चाहिए। परन्तु यदि याद करने का विषय बहुत लम्बा है तो उसे कई टुकड़ों में विभाजित करके आंशिक रीति से याद करना श्रेयस्कर होता है। फिर भी यदि हमारा पाठ छोटा और सरल है तो उसे पूर्ण रीति से याद करना ठीक होगा, परन्तु यदि याद करने का पाठ कठिन है तो छोटा रहने पर भी उसे आंशिक रीति से ही याद करना चाहिए।

यदि हम किसी लम्बे पाठ को पूर्ण रीति से याद करने की कोशिश करें तो उसकी लम्बाई के कारण हमें थकावट मालूम होने लगेगी और थकावट की वजह से हम उसे शीघ्र अच्छी तरह से याद करने में समर्थ नहीं हो सकते। दूसरी बात यह है कि लम्बा पाठ होने से हमारा मन भी ऊब जाता है और पाठ अच्छी तरह याद नहीं होता है। अतएव लम्बे और कठिन पाठों को आंशिक रीति से ही याद करना अच्छा है। प्रयोग करने

से मालूम हुआ है कि २४० लाइन तक की कविता पूर्ण रीति से ही याद करना अच्छा है। इसके अतिरिक्त हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इन रीतियों की सार्थकता व्यक्ति विशेष पर भी निर्भर करती है। इसलिए व्यक्ति विशेष के अनुसार कोई भी रीति किसी पाठ को याद करने के लिए ठीक हो सकती है।

Q. 87 Describe the nature of thinking. How does reasoning differ from thinking? Give an example. (1948 H.)

साधारण बोलचाल की भाषा में और विशेषतः अंग्रेजी के बोलचाल की भाषा में चिंतन (Thinking) शब्द का प्रयोग विचार (Thought) के अर्थ में होता है और ऐसा लगता है जैसे विचार या चिंतन कोई स्थिर वस्तु हो। परन्तु वस्तुतः ऐसी बात नहीं है। चिंतन एक मानसिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी सर्वकालीन और सर्वव्यापी सत्य का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिये हम एक समस्यापूर्ति को ले सकते हैं। दो लड़के एक मीनार पर खड़े थे। एक ने दूसरे से पूछा, इसकी लम्बाई कितनी होगी? सहसा दोनों को कोई जवाब न सूझ पड़ा। एक ने कहा कि इसकी सीढ़ियाँ गिन डालो। दूसरे ने बताया कि सामने वाले मकान से इसकी ऊँचाई दूनी होगी। परन्तु दोनों में से कोई भी उपाय सन्तोषजनक नहीं जान पड़ा। सहसा पहले ने एक उपाय सोचा। उसने मीनार की छत से एक सिक्का गिराया और देखा कि सिक्के को जमीन पर पहुँचने

में कितना समय लगता है। सिक्के को जमीन पर पहुँचने में २½ सेकंड समय लगा। इसके बाद हिसाब जोड़ कर उसने निकाल लिया कि उस मीनार की लम्बाई १०० फीट है।

चिंतन क्रिया का यह एक उदाहरण हुआ। विश्लेषण करने से इसके कई मूलतत्व निकलते हैं। (१) सबसे पहली बात है चिंतन के लिये मनुष्य के सामनें कोई ऐसी समस्या होनी चाहिये जिसे हल करने में पुरानी आदतों से कोई काम नहीं चलता हो। तभी हम उस समस्या पर चिंतन करने को बाध्य होते हैं।

(२) जब हम उस समस्या पर चिंतन करना शुरु करते हैं तो हम भूतकाल में सीखे हुये व्यवहारों को काम में लाते हैं और तबतक विभिन्न प्रक्रियाएँ करते चले जाते हैं जबतक हमें उस समस्या का उचित निदान नहीं मिल जाता। हमारी बहुत सी प्रक्रियाएँ ठीक नहीं होती हैं। फिर भी उन्हें बिलकुल बेकाम की नहीं कही जा सकती, क्योंकि उनसे हमें ठीक सुलझाव पर पहुँचने में मदद मिलती है।

(३) इस तरह हम देखते हैं कि चिंतन मे भी प्रयत्न और भूल की क्रिया आ जाती है। परन्तु चिंतन में यह क्रिया केवल मानसिक ही हुआ करती है। ऊपर के उदाहरण में पहले दो उपाय गलत साबित होते हैं और तब अन्त में सही रास्ता निकलता है।

(४) फिर भी इन विभिन्न प्रकार की गलत और सही प्रक्रियाओं मे एक दिशा होती है। हम यों ही विभिन्न चेष्टाएँ

नहीं करते। हमें एक उद्देश्य पर पहुँचना होता है और वह उद्देश्य है समस्या का सुलझाव। इसी दिशा की ओर हमारी सारी प्रक्रियाएँ प्रवाहित होती हैं।

(५) चिंतन की प्रक्रिया में हम एक खास तरह की चेष्टाएँ करते हैं। हमारी चेष्टाएँ उस समस्या से सम्बद्ध होती हैं जिस पर हम विचार करते होते हैं। ऊपर के उदाहरण में लड़के सिक्का गिराते हैं, उसका समय नापते हैं, भाषा का उपयोग करते है, आदि।

(६) अन्त में हम देखते हैं कि चिंतन की विभिन्न प्रक्रियाओं मे एक सूत्र होता है। हमारी विभिन्न प्रक्रियाएँ अलग-अलग नहीं होती। उनमें एक नवीन योग, एक नवीन रचना रहा करती है, और इसी नवीन रचना के फलस्वरूप हमे समस्या की पूर्ति मिलती है।

(a) आगे हमें देखना है कि तर्क और चिंतन में क्या भेद है। पहले हम तर्क का एक उदाहरण लें। सभी मनुष्य मरणशील हैं। राम भी एक मनुष्य है; अतएव वह भी मरणशील है। यह तर्क का एक उदाहरण हुआ। हम देखेंगे कि तर्क भी विचार ही की एक क्रिया है, परन्तु यह क्रिया चिंतन से अधिक यथाक्रम और नियमानुशील है। चितन में हम तर्क के पूर्वोत्तर पक्षों को ध्यान में नहीं लाते और सीधे परिणाम पर पहुँच जाते हैं। परन्तु तर्क में हम बिना दो पक्षों के, परिणाम पर नहीं पहुँच सकते।

(b) फिर तर्क में 'प्रयत्न और भूल' की क्रिया लागू नहीं होती। अगर हमें दो पक्ष मिल जायँ तो हम उनसे एक तीसरा निश्चित परिणाम निकाल सकते हैं। चिंतन में एकाएक कोई ठीक सुलझाव नहीं निकाल सकते। चिंतन में हम अपने उद्देश्य की प्राप्ति 'प्रयत्न और भूल' की क्रिया द्वारा ही करते हैं।

(c) चिंतन की क्रिया का हमलोगों को पूर्णतः ज्ञान रहता है, किंतु तर्क हमलोग अप्रयत्न रूप से भी करते हैं। जब किसी खूंखार जानवर को देखकर कोई व्यक्ति भागता है तो वहाँ वह तर्क का ही आश्रय लेता है, किंतु उन सभी प्रक्रियाओं से वह अभिगत नहीं होता।

प्रशस्त अर्थ में चिंतन का प्रयोग कई अर्थों में होता है, जिससे कई प्रकार की मानसिक क्रियाओं का बोध होता है, लेकिन तर्क का प्रयोग सदा एक विशिष्ट अर्थ में होता है।

इसी प्रकार इन दोनों में कुछ और भी अन्तर हैं, लेकिन हम-लोग उनका वर्णन यहाँ नहीं करेंगे।

Q. 88 Is thinking a trial-error process? Discuss this question in brief.

चिंतन वह मानसिक क्रिया है जिसके द्वारा हम किसी वर्त-मान समस्या को सुलझाने में समर्थ होते हैं। मान लें, कोई आदमी आराम कुर्सी पर बैठा हुआ दिवास्वप्न (Day Dreaming) में तल्लीन है। उसी समय सहसा उस मकान में आग लग जाती है। अब उस आदमी के सामने एक समस्या उपस्थित हो जाती

है, और वह समस्या है रक्षार्थ घर से बाहर निकलने की। इस समस्या के उपस्थित होते ही उसमें चिंतन-क्रिया का आविर्भाव होता है और वह घर से बाहर निकलने का उपाय सोचने लगता है। अन्त में वह इसी निर्णय परी विचार के द्वारा पहुँचता है कि खिड़की का शीशा तोड़कर बाहर निकलना ही ठीक है। वह शीघ्र शीशा तोड़-फोड़कर बाहर निकल कर अपनी प्राण-रक्षा करता है।

अब प्रश्न यह होता है कि चिंतन में प्रयत्न और भूल (Trial and error) की क्रिया होती है कि नहीं ? इस प्रश्न का उत्तर देने के पहले यह व्यक्त कर देना आवश्यक है कि इसके सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिको में मतभेद है। कुछ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार चिंतन में प्रमाद और भूल (Trial and error) की क्रिया नहीं होती। परन्तु व्यवहारवादियों का कहना है कि विचार में भी उसी प्रकार प्रयत्न और भूल की क्रिया होती है जिस प्रकार की जानवरों के शिक्षण में। व्यवहारवादियों ने अपने सिद्धान्त की पुष्टि के लिए अनेको प्रयोग किया है और प्रमाणित कर दिया है कि चिंतन में प्रमाद और भूल की क्रिया का होना जरूरी है। इस सम्बन्ध में रूजर ने कई प्रयोग किया है।

यदि इस प्रश्न पर विचार उदाहरण लेकर किया जाय तो यह और भी सरल हो जाएगा। जैसा कि ऊपर के उदाहरण में बतलाया गया है, आग लगने पर आराम कुर्सी पर बैठा हुआ

आदमी विचार करता है और शीशा तोड़कर बाहर निकल आता है। यहाँ शीशा तोड़कर बाहर निकलने के विचार के पहले भी वह बाहर निकलने को ही सोचता रहा होगा। कभी तो वह सोचता रहा होगा कि कहीं छिप जाय, किंतु छिपने से प्राणरक्षा की गुंजाइश नहीं थी। कभी सोचता रहा होगा कि छत पर चढ़कर बाहर कूद जाय और कभी सोचता रहा होगा कि वह सामने के दरवाजा से भागकर निकल जाय। परन्तु उसके ये सभी विचार उपयुक्त साधन के अभाव में ठीक नहीं थे, इसलिए वह अन्तिम विचार पर पहुँचा।

यहाँ हम देखते हैं कि जिस प्रकार सीखते समय अन्य जीव प्रयत्न और भूल की क्रिया करते हैं उसी तरह चिंतन में भी होती है। लेकिन सीखने में शारीरिक व्यापार नहीं होता।

फिर भी सीखने में जो प्रयत्न और भूल की क्रिया होती है वह प्रायः ध्येयविहीन होती है और चिंतन की क्रिया का हमेशा ध्येय सामने रहता है। अतएव हम कह सकते हैं कि यद्यपि चिंतन में भी प्रयत्न और भूल की क्रिया होती है किन्तु यह क्रिया मानसिक होती है, शारीरिक नहीं।

Q. 89 Explain the relation of thinking to language and point out the nature of thinking.

भाषा और चिंतन का सम्बन्ध बहुत ही घनिष्ठ है। प्रायः इन दोनों का विकास (Development) साथ-साथ होता है। इस

लोग अपने-अपने विचारों को भाषा के ही द्वारा व्यक्त करते हैं। जिस आदमी में भाषा का आधिक्य रहता है उसमें चिंतन की उतनी ही शक्ति विद्यमान रहती है। भाषा से चिंतन को बहुत मदद मिलती है। कभी-कभी जब हमलोग किसी समस्या पर विचार करते हैं तो स्वयं बात भी करते है। हमलोग अपने विचारों को भाषा के ही द्वारा व्यक्त करते हैं। जानवरों में भाषा का अभाव रहता है, इसलिए उनमें विचार करने की भी शक्ति नहीं रहती। कहने का अभिप्राय यह है कि इन दोनों का सम्बन्ध इतना सन्निकट है कि व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि ये दोनों एक ही हैं, परन्तु यहाँ यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि उनका ऐसा सोचना पूर्णतः दोष पूर्ण है।

यद्यपि भाषा और चिंतन एक दूसरे के सहायक हैं लेकिन ये दोनों एक कदापि नहीं हैं। हम बराबर देखते हैं कि हम सोचते कुछ और हैं और बोलते कुछ और हैं। कभी-कभी हमलोग भाषाविहीन भी विचार करते हैं। प्रायः ऐसा देखने में आता है कि हमलोग सहसा बहुत कुछ बोल जाते हैं, लेकिन बोलते समय हमारे मन में किसी प्रकार का भी विचार नहीं रहता। हमलोग कभी-कभी कई पन्नों को बिना समझे पढ़ जाते हैं। यहाँ भाषा मौजूद रहती है, लेकिन विचार का अभाव रहता है। फिर भी एक ही विचार को हमलोग कई भाषाओं में व्यक्त करते हैं या कई विचारों को एक ही भाषा में व्यक्त करते हैं। ऐसे स्थलों पर भी भाषा और विचार में एकीकरण नहीं होता। अतएव हम कह

सकते हैं कि भाषा और चिंतन का सम्बन्ध बहुत ही घनिष्ठ है तथापि दोनों एक नहीं है।

दूसरे भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६६ देखें।

Q. 90 What is thinking? Discuss how thinking is a problem solving.

इस प्रश्न के पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६६ का उत्तर देखें।

दूसरे भाग का उत्तर देने के लिए यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि मनुष्य को विचारशील प्राणी कहा गया है, लेकिन वस्तुतः मनुष्य हमेशा नहीं सोचता है। हमलोग साधारण भाषा में दिवास्वप्न इत्यादि की भी परिगणना चिंतन के ही अन्तर्गत करते हैं, लेकिन ऐसा करना भ्रम मूलक है। वास्तविक विचार क्रिया का आविर्भाव तो हमलोगों में उस समय होता है जब कि हमलोगों के सामने किसी प्रकार की समस्या उपस्थित हो जाती है। इसे उदाहरण देकर समझना और भी अच्छा होगा। मान लें कोई आदमी शाम को एकान्त में हवाखोरी कर रहा है, इसी समय उसे एक मतवाला हाथी आता हुआ दिखाई देता है। जब उसे वह हाथी देख पड़ता है तब उसे अपने बचाव के लिए विचार करना पड़ता है। कभी वह छिपने को सोचता है, लेकिन छिपने के लिए कोई उपयुक्त स्थान नहीं है। इसलिए वह भागने का विचार करता है, लेकिन भागने से हाथी से बचाव की कोई आशा नहीं। तब वह

निकट के पेड़ पर चढ़ने का विचार करता है और दौड़कर झट पेड़ पर चढ़ जाता है। यहाँ हम देख रहे हैं कि पहले वह आदमी टहल रहा था और उसमें किसी तरह की विचार क्रिया नहीं थी। लेकिन ज्यों ही वह हाथी को देखता है, त्योंही प्राण रक्षा के लिए उसमें विचार क्रिया उत्पन्न हो जाती है। अतएव हम कह सकते हैं कि चिंतन का आविर्भाव किसी समस्या को हल करने के ही लिए होता है।

CHAPTER 10.

FEELING AND EMOTION

Q 91- What is feeling? How can it be distinguished from sensation? (1946 A.)

हमारे मन की तीन अवस्थाएँ होती हैं प्रज्ञात्मक अवस्था, क्रियात्मक अवस्था और भावात्मक अवस्था। भाव, मन का भावात्मक या वेदनात्मक अवस्था (Affective state) है जिसमें मानसिक चेतना अन्य दो अवस्थाओं से भिन्न होती है। हम लोग हमेशा अपनी जबान में कहा करते हैं कि इस समय हमारे मन में सुखद भाव या दुःखद भाव मौजूद है। भाव का आविर्भाव कभी प्रज्ञान (cognition) से होता है और कभी क्रियात्मक प्रवृत्ति से। भाव की अवस्था में हमारा मन विशेष रूप से प्रभावित होता है और उस समय, सुख, दुःख या विरक्ति का अनुभव करता है। भाव हमारा आत्मगत (Subjective) अनुभव है जिसकी अनुभूति अन्य जीव को नहीं हो सकती।

भाव की अनुभूति करते वक्त व्यक्ति निष्क्रिय रहता है- उसमें अन्य मानसिक क्रियाओं के समान सक्रियता नहीं रहती। कहने का अभिप्राय यह है कि भाव एक विशिष्ट अनुभव है जिसकी परिभाषा कठिन है। इसलिए इसे और बोधगम्य बनाने के लिए इसकी विशेषताओं का उल्लेख करना आवश्यक है।

भाव की पहली विशेषता यह है कि चंचल एवं अस्थायी होता है। हमे बराबर एक ही भाव का अनुभव नहीं होता, बल्कि वह सदा बदलता रहता है।

इसका प्रभाव किसी स्थान विशेष पर नहीं पड़ता, बल्कि इस से हमारा सारा शरीर प्रभावित होता है। यदि हम यह चाहें कि इसे शरीर के किसी खास हिस्से में निश्चित करें तो ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि जब किसी प्रकार का भाव हमारे मन में उठता है तो उसका असर हमारे सम्पूर्ण शरीर पर पड़ता है।

भाव की तीसरी विशेषता यह है कि कोई व्यक्ति एक समय में एक ही भाव का अनुभव कर सकता है, क्योंकि भाव हमेशा एक दूसरे के विरोधी होते हैं। जब हमें दुःखद भाव का अनुभव हो रहा हो तो उस समय सुखद भाव का अनुभव नहीं हो सकता।

भाव की चौथी विशेषता यह है कि इसके साथ-साथ अन्य मानसिक क्रियाएँ भी होती रहती हैं। भाव का अनुभव कभी अकेला नहीं होता। हाँ, इतना जरूर है कि उस समय भाव की ही विशेषता रहती है।

भाव और संवेदना के अन्तरों का उल्लेख करने के लिए यह ध्यान में रखना जरूरी है कि जब हमारे मन में किसी प्रकार का भाव उठता है और हम उसका अन्तर्निरीक्षण करना आरंभ करते है तो वह तुरत गायब हो जाता है, किंतु जब किसी संवेदना पर ध्यान लगाते हैं तो वह और स्पष्ट हो जाती है।

भाव का अनुभव हम अपनी इच्छानुसार नहीं कर सकते, क्योंकि वह बराबर बदलता रहता है, लेकिन संवेदना का अनुभव हम अपनी इच्छानुसार जबतक चाहें तबतक कर सकते हैं।

भाव का सबन्ध किसी इन्द्रिय विशेष से नहीं रहता है, परंतु संवेदना का सम्बन्ध किसी इन्द्रिय विशेष से रहता है। इसलिए भाव को शरीर के किसी एक भाग मे हम स्थान नहीं दे सकते, लेकिन संवेदना को दे सकते हैं।

एक व्यक्ति एक समय मे किसी एक ही भाव का अनुभव कर सकता है, क्योंकि भाव एक दूसरे के विरोधी होते है, लेकिन वही व्यक्ति एक समय मे कई प्रकार की विरोधी सवेदनाओं का अनुभव कर सकता है।

हम अपने गत भाव को पुनः अनुभव नहीं कर सकते, क्योंकि उसका स्मरण नहीं होता, बल्कि एक नए भाव का स्मरण होता है, लेकिन संवेदना को फिर से दोहरा सकते हैं।

जब हम किसी प्रकार के भाव का अनुभव करते है तो उस समय हमें अपने आप के विषय में मालूम होता है। उससे

संसार के विषय में कुछ नहीं मालूम होता है। संवेदना के वक्त हमें उत्तेजना के गुण की जानकारी होती है और इस तरह से हम बाहरी दुनियाँ के विषय में जानकारी हासिल करते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि भाव हमारा आत्मगत अनुभव है, लेकिन संवेदना विधेयात्मक (objective) अनुभव है।

Q. 92 Give the characteristics of feeling. How does feeling differ from emotion ? (1948 S.)

पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७०, १९४६ A. देखें।

यद्यपि भाव (Feeling) और संवेग दोनों एक दूसरे से बहुत अंश में मिलते-जुलते हैं तथापि इन दोनों में निम्नांकित भेद है।

भाव एक सरल मानसिक अवस्था है, लेकिन संवेग जटिल (Complex) अवस्था है। संवेग के समय व्यक्ति या जीव में कई प्रकार की क्रियाएँ होती हैं, लेकिन भाव के समय कई क्रियाएँ नहीं होतीं।

संवेग भाव के बिना नहीं हो सकता, लेकिन भाव संवेग के बिना संभव है। जब हम किसी प्रकार के संवेग का अनुभव करते है तो उसके साथ-साथ किसी प्रकार के भाव का भी अनुभव होता है, लेकिन भाव बिना संवेग के भी रहता है।

भाव का जन्म किसी चीज या जीव के कारण होता है, किंतु संवेग किसी परिस्थिति की कल्पना, प्रत्यक्ष या स्मृति से होता है।

भाव के समय व्यक्ति शिथिल रहता है, किंतु संवेग के समय वह क्रियमाण हो जाता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि भाव में संवेग की अपेक्षा मनुष्य निष्क्रिय रहता है।

भाव किसी व्यक्ति का आत्मगत अनुभव है जो उस व्यक्ति विशेष के सम्बन्ध में कुछ व्यक्त करता है, किंतु संवेग को हम विधेयात्मक अनुभव कह सकते हैं, क्योंकि उसका सम्बन्ध बाह्य परिस्थिति (Situation) से रहता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भाव और संवेग एक दूसरे से कई अंशों मे भिन्न हैं।

Q. 93 Explain and illustrate what is meant by emotion. Show its relation to instinct. (1944 A.)

संवेग का सम्बन्ध हमारे मानस जीवन के भावात्मक पहलू से है जिसका आविर्भाव किसी परिस्थिति विशेष की कल्पना, स्मृति या प्रत्यक्ष से होता है। जब हम किसी प्रकार का संवेग अनुभव करते है तो उसके साथ-साथ किसी प्रकार का भाव भी रहता है। क्रोध, भय और विषादादि संवेग कहलाते हैं। मान लीजिए हम कहीं अन्धेरे में जा रहे हों और पेड़ से लटकती हुई कोई चीज दिखाई दे और उसे हम देख कर भागना आरंभ कर दे। इस अवस्था में हमारा भागना भय के संवेग के फल-स्वरूप होता है। संवेग वह जटिल मानसिक प्रक्रिया है जिसमें जीव अत्यन्त सक्रिय बन जाता है। यदि हम किसी साँप को

अपनी ओर आते हुए देखते हैं तो डर कर भागना शुरू कर देते हैं। किसी प्रकार के संवेग के समय हमारे मन में सभी प्रकार की क्रियाएँ विद्यमान रहती है और उस समय व्यक्ति के अन्तर्जगत में हलचल मच जाती है। इसको और भी स्पष्ट करने के लिए यह व्यक्त कर देना जरूरी है कि संवेग हमलोगों का व्यक्तिगत अनुभव है जो किसी परिस्थिति के प्रत्यक्ष, कल्पना या स्मृति से उत्पन्न होता है। इसके साथ किसी भाव का रहना आवश्यक है। संवेग के समय हम लोगो मे विचारशक्ति की कमी हो जाती है, इसीलिए कभी-कभी क्रोध की हालत मे हमलोग ऐसा काम कर बैठते हैं जिसके लिए बराबर पछताना पड़ता है। संवेग केवल आदमियो मे ही नहीं होता, बल्कि सभी जीवों में पाया जाता है। हाँ, इसकी विचित्र विशेषता यह है कि यदि किसी संवेग के प्रकाशन का अवसर नहीं मिलता है तो वह दूसरे रूप मे भी प्रकाशित हो जाता है। अन्त में इतना कह देना जरूरी है कि संवेग के समय मनुष्य मे कई प्रकार के बाहरी और आन्तरिक परिवर्त्तन होते हैं।

यद्यपि संवेग और मूलप्रवृत्ति (Instinct) एक दूसरे से भिन्न हैं, तथापि इन दोनो में कई समानताएँ हैं। पहली बात तो यह है कि जिस प्रकार हमारी मूलप्रवृत्तियाँ जन्मजात (Inborn) होती हैं उसी प्रकार हमारे कुछ संवेग भी जन्मजात होते हैं। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि ये दोनो एक दूसरे से इस प्रकार मिले रहते हैं कि हम उनको अलग करने में असमर्थ हो जाते

है। जब हम किसी खतरनाक जानवर को देखते हैं तो भागना शुरू कर देते हैं। ऐसे अवसर पर यह कहना बहुत कठिन है कि यह भागना आत्मरक्षा की मूलप्रवृत्ति के फलस्वरूप होता है या भय के संवेग के कारण। कहने का आशय यह है कि जिस पदार्थ से किसी मूलप्रवृत्ति का प्रकाशन होता है वही किसी संवेग को भी उत्पन्न कर देता है। मेकडुगल कहता है कि संवेग को हम मूलप्रवृत्ति से अलग नहीं कर सकते, क्योंकि संवेग ही मूलप्रवृत्तियों के प्राण हैं। उसके अनुसार प्रत्येक मूलप्रवृत्ति एक विशेष प्रकार के संवेग से आबद्ध रहती है, लेकिन विवेचन करने पर मालूम होगा कि उसका यह सिद्धान्त पूर्णतया मान्य नहीं है। हाँ, इतना अवश्य है कि इन दोनों का सम्बन्ध घनिष्ठ है। लेकिन इतना होते हुए भी हम-लोगों को यह नहीं भूलना चाहिए कि संवेग के समय हमलोगों में भाववृत्ति प्रधान रहती है और मूलप्रवृत्ति के समय क्रियाप्रवृत्ति की प्रधानता रहती है।

Q. 94 What is an emotion ? Point out the bodily changes involved in fear. (1915 A.)

पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७२ सन् १६४४A देखें।

भय (Fear) के संवेग के समय शरीर में बाहरी और भीतरी दोनों प्रकार के परिवर्त्तन होते हैं। यहाँ यह व्यक्त कर देना जरूरी है कि जब मनुष्य या अन्य जीव किसी परिस्थिति

को खतरनाक समझता है तो उस समय उसके मन में भय का संवेग पैदा हो जाता है। यह संवेग अन्य सबबों से भी पैदा हो सकता है।

भय के संवेग के समय आदमी का चेहरा पीला पड़ जाता है। रोंगटे खड़े हो जाते हैं। आँखें और मुंह खुले रहते हैं। वह भय के कारण थर-थर काँपने लगता है और कभी-कभी दौड़ना शुरु कर देता है। जहाँ भागने का मौका नहीं मिलता है वहाँ कहीं छिप जाता है। उसका मुँह सूखने लगता है जिससे उसे प्यास मालूम होने लगती है। कलेजा धक-धक करने लगता है। ये सब परिवर्त्तन बाहरी होते हैं, लेकिन प्रयोग द्वारा भीतरी परिवर्त्तन भी भय के संवेग के वक्त देखे गए हैं। कैनन ने इस बात को साबित कर दिया है कि भय के समय रक्त मे रासायनिक तबदीलियाँ हो जाती हैं और स्नायुओं में भी विशेष परिवर्त्तन हो जाता है। उनमें अतिरिक्त शक्ति (Extra-energy) आ जाती है जिससे जीव वातावरण में अपने को अभियोजित करने में समर्थ होता है। पेट की पाचन क्रिया रुक जाती है और पाचक रस का निकलना बन्द हो जाता है। मस्तिष्क में भी आन्तरिक परिवर्त्तन प्रयोग द्वारा देखा गया है। इन परिवर्त्तनो के अतिरिक्त और भी कई आन्तरिक परिवर्त्तन देखे गए हैं जो जीव के लिए संवेग के समय बहुत ही मुफीद सिद्ध होते है।

Q. 95 What is emotion? Indicate some bodily changes in emotion. (1946 S.)

पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७२ सन् १९४४ S देखें।

संवेग कई तरह के होते है और सभी मे आन्तरिक और बाह्य शारीरिक परिवर्त्तन होते हैं।

बाहरी परिवर्त्तन में संवेग के समय या तो शरीर सीधा हो जाता है या झुक जाता है। क्रोध मे शरीर कड़ा हो जाता है, लेकिन भय के समय वह झुक जाता है। किसी-किसी संवेग मे चेहरा पीला पड़ जाता है और किसी मे लाल हो जाता है। आँख की भौंहें खड़ी हो जाती हैं। किसी-किसी में आँखें खुली रहती हैं और किसी-किसी में बन्द रहती हैं। मुँह कभी खुला रहता है तो कभी बन्द। क्रोध मे आदमी होठों को पीसता है और मुट्ठी भी बन्द करता है। आवाज कभी मन्द पड़ जाती है और कभी कर्कश हो जाती है। प्यास भी किसी-किसी संवेग में मालूम होती है, क्योंकि मुँह सूख जाता है।

प्रयोग द्वारा आन्तरिक परिवर्त्तनों को देखा गया है और पता लगा है कि पेट की क्रिया कई संवेगों मे रुक जाती है और पाचक रस का निकलना बन्द हो जाता है। खून मे रासायनिक परिवर्त्तन हो जाता है और उसकी गति मे भी फर्क पड़ जाता है। तिल्ली (Kidneys) के भी काम में गड़बड़ी हो जाती है। हृदय की गति तीव्र हो जाती है या धीमी पड़ जाती है। स्नायुओं

में विशेष शक्ति (Extra energy) आ जाती है। मस्तिष्क के विभिन्न भागों में भी अन्तर पड़ जाता है। शरीर का कोई भी भीतरी हिस्सा ऐसा नहीं रहता जिसमें किसी प्रकार की तबदीली न आती हो। ये सभी तबदीलियाँ X,Ray और अन्य प्रयोगों द्वारा देखी जा सकती हैं। ये परिवर्त्तन जीव को संवेग के समय परिस्थति के अनुकूल अभियोजित करने में सहायक होते हैं।

Q 96 What is emotion? State the bodily changes involved in the emotion of anger. (1947 A.)

पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७२, १६४४ A. देखें।

जब क्रियावृत्ति में किसी तरह की रुकावट पड़ती है तो क्रोध (Anger) का संवेग होता है। क्रोध के समय मनुष्य का चेहरा लाल हो जाता है और आँख की भौंहें तन जाती है। जो आदमी क्रोधावस्था मे रहता है वह अपने दातों को पीसने लगता है और होठों को दबाने लगता है। उसका शरीर कड़ा हो जाता है और कभी-कभी आगे को झुक भी जाता है। हाथ-पैर इधर-उधर चलाने लगता है और चीजों को तोड़ने-फोड़ने लगता है। उसके शरीर पर पसीना आ जाता है। आँखें भी क्रोध के मारे लाल-लाल हो जाती हैं और वह बहुत जल्दी-जल्दी सांस लेने लगता है। उसका मुँह भी सूख जाता है, लेकिन ऐसा शरीर के भीतरी परिवर्त्तनों के कारण होता है।

भीतरी परिवर्त्तन भी कैनन तथा अन्य मनोवैज्ञानिकों द्वारा देखे गए हैं। शरीर का कोई भी हिस्सा ऐसा नहीं है जिसमें किसी प्रकार का परिवर्त्तन न होता है, लेकिन पेट की क्रिया में विशेष अन्तर पड़ता है और उससे पाचक रस का निकलना बन्द हो जाता है। रक्त में रासायनिक परिवर्त्तन हो जाता है और उसकी गति भी तेज हो जाती है। क्रोध की हालत में स्नायुओं में विशेष ताकत आ जाती है। इनके अलावे क्रोध में और भी कई तरह के शरीर के भीतरी भागों में परिवर्तन होते हैं जो सूक्ष्म यंत्रों द्वारा देखे जा सकते हैं।

Q. 97 Describe the characteristics of the emotion of fear or of anger. What bodily changes take place when an individual is angry or afraid? (1948 A.)

भय या क्रोध के संवेग की विशेषताओं का उल्लेख करने के लिए यह व्यक्त करना जरूरी है कि संवेग के समय मनुष्य में सोचने की शक्ति कम हो जाती है, इसीलिए क्रोध या भय की हालत में मनुष्य ऐसा काम कर बैठता है जिसके लिए उसे जीवन भर पछताना पड़ता है। कभी-कभी तो ऐसी अवस्था हो जाती है कि मनुष्य किं कर्त्तव्य विमूढ़ हो जाता है और उसे कुछ नहीं दीख पड़ता कि उसे क्या करना चाहिये।

दूसरी विशेषता यह है कि ये संवेग किसी परिस्थिति की कल्पना, प्रत्यक्ष या स्मृति से किसी पदार्थ विशेष के प्रति होते हैं

और इनके साथ आत्मरक्षा की मूलप्रवृत्ति रहती है। इन दोनों प्रकार के संवेगों में अरुचिकर भाव (unpleasantfeeling) मौजूद रहतो है। इन संवेगों तथा अन्य संवेगों में कई प्रकार के शारीरिक परिवर्त्तन होते हैं। भय या क्रोध के संवेग का आरोपण अवसर न मिलने पर दूसरे पदार्थ से भी हो जाता है। क्रोध के संवेग के समय आदमी क्रियाशील बन जाता है। भय में भी वह भागना चाहता है या छिपना चाहता है। इस प्रकार हम देखते है कि संवेग का सम्बन्ध क्रियात्मक वृत्ति से बहुत ही घनिष्ठ है। यों तो और कई भी संवेगों की विशेषताएँ है, लेकिन ये ही विशेषताएँ मुख्य हैं।

क्रोध या भय के समय परिवर्त्तनों के लिए प्रश्न नम्बर ७५ सन् १९४७ A और प्रश्न नम्बर ७२ सन् १९४५ A देखें।

Feeling and emotion.

Q. 98 What is emotin ? describe the bodily changes which occur in the emotion of fear. (1949 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ९४ का उत्तर देखे।

Q. 99 Describe the nature and condtions of the emotion of anger. What is one liclined to do when angry ? (1950 A.)

क्रोध के संवेग के स्वरूप (Nature) के लिये प्रश्न नम्बर ९७ का उत्तर देखें।

क्रोध (Anger) के संवेग (Emotion) के Conditions को व्यक्त करने के लिये यह स्पष्ट कर देना जरूरी है कि जब हम या अन्य जीव किसी ध्येय की पूर्ति के लिये कोई क्रिया करते हैं और यदि उस क्रिया में किसी तरह का विघ्न उत्पन्न होता है तो उस समय हम क्रोध संवेग का अनुभव करते हैं। जब गाय कहीं कुछ चरती रहती है और उसे कोई चरने मे बाधा देता है तब वह क्रोध में आकर उस व्यक्ति को मारने के लिये दौड़ती है।

इसके अतिरिक्त भी अपने शत्रु द्वारा किये गए अपमान, क्षति की स्मृति, कल्पना और शत्रु के प्रत्यक्ष से भी क्रोध संवेग का आविर्भाव होता है। जब हम अपने शत्रु को देखते हैं तो स्वतः क्रोध में आ जाते हैं। इसी प्रकार अपनी क्षति और अपमान करनेवाले के विचार मात्र से भी हम क्रोध का अनुभव करने लगते हैं।

जब कोई मनुष्य क्रुद्ध होता है तब वह अपने शरीर को कड़ा कर लेता है, हाथों को आगे और अगल-बगल फेकने लगता है। अनाप-शनाप भी बकने लगता है। जिस पर क्रोध करता है उसे मारने-पीटने लगता है या आस-पास की चीजों को उठा-उठाकर फेकने लगता है या छिन्न-भिन्न करने लगता है। वह कभी-कभी अपने सामानों को भी तोड़ने-फोड़ने लगता है या शरीर को भी कुचलने लगता है। दाँत पीसना और हाथ की मुट्ठियों को बाँधने की भी क्रिया देखने में आती है। इसके अतिरिक्त और भी कई तरह के व्यवहार देखने में आते हैं।

Q. 100 Distinguish between feeling and sensation. Describe the different kinds of feeling with examples. (1950 S.)

इस प्रश्न के पहले भाग के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ५१ के दूसरे भाग का उत्तर देखिये।

भाव (Feeling) तीन प्रकार के होते हैं सुखद, दुःखद और विरक्त भाव। इन तीनों को एक उदाहरण के साथ समझा देना विशेष सुविधा जनक होगा।

कोई व्यक्ति राष्ट्रीय गाना गा रहा है। वह गाना किसी को रुचिकर मालूम होता है, किसी को अरुचिकर और किसी को न तो रुचिकर ही मालूम होता है और न अरुचिकर ही। इस उदाहरण में वह राष्ट्रीय गान जिसे रुचिकर मालूम होता है उसमें सुखद भाव विद्यमान है, क्योंकि सुखद भाव रुचिकर ही प्रतीत होता है। जिसे वह गाना अरुचिकर मालूम होता है उसमे दुःखद भाव मौजूद है, क्योंकि अरुचिकर चीज दुःख ही उत्पन्न करती है। जिसमें इन दोनो पहलुओं का अभाव है अर्थात् जिसे वह गाना न तो अच्छा ही मालूम होता है और न बुरा ही उसमें विरक्त भाव मौजूद है, क्योंकि विरक्त भाव न तो अच्छा ही गुण से युक्त होता है और न बुरा ही गुण से। प्रायः ये ही भाव प्रकार हैं, किन्तु कुछ मनोवैज्ञानिक केवल पहले ही दो प्रकारों को मानते हैं।

CHAPTER 11.

NON-VOLUNTARY ACTION

Q. 101 Distinguish a reflex-action from an instinct. What are the characteristics of instinct? (1945 A.)

सहजक्रिया (Reflex-action) और मूल प्रवृत्त्यात्मक क्रिया (Instinctive-action) के भेद को स्पष्ट करने के लिए यह व्यक्त करना जरूरी है कि सहजक्रिया से जिस ध्येय की पूर्ति होती है उसका ज्ञान प्राणी को नहीं रहता है, किंतु मूल प्रवृत्त्यात्मक क्रिया में जो ध्येय रहता है उसका ज्ञान प्राणी को रहता है।

सहजक्रिया के ढंग मे जीवन के अनुभव से किसी प्रकार का परिवर्त्तन नहीं होता है, लेकिन मूल प्रवृत्त्यात्मक क्रिया के ढंग में परिवर्त्तन भी होता है।

सहजक्रिया का सम्बन्ध बुद्धि से नहीं रहता है, परन्तु मूल-प्रवृत्त्यात्मक क्रिया का नियंत्रण हमारी मनीषा करती है।

सहजक्रिया सरल एवं स्थानीय होती है, लेकिन मूल प्रवृत्त्यात्मक क्रिया जटिल होती है जिसका सम्बन्ध शरीर के अवयव विशेष से नहीं रहता।

सहजक्रियाओं का नियंत्रण नहीं हो सकता, लेकिन मूल-प्रवृत्त्यात्मक क्रियाओं का नियंत्रण होता है। हम छींक को नियंत्रण करने की कोशिश करते हैं, लेकिन हमे छींक आ ही

जाती है, परन्तु किसी मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया को रोकना चाहते हैं तो उसे रोकने में समर्थ होते है।

सहजक्रिया बहुत थोड़े काल के लिए होती है परन्तु मूल-प्रवृत्त्यात्मक क्रिया बहुत देर तक होती रहती है।

मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रियाओं की निम्नाङ्कित विशेषताएँ है

(१) मूल प्रवृत्ति हमलोगों मे जन्मजात होती है, इसे हम-लोग अपने जीवन मे अर्जित नहीं करते है।

(२) प्रत्येक मूलप्रवृत्ति मे किसी प्रकार का संवेगात्मक भाव छिपा रहता है। जब हमलोग साँप को देखकर भागते हैं तो उस भागने में भय का संवेगात्मक भाव भी रहता है।

(३) मूलप्रवृत्तियाँ वंशानुक्रम से प्राप्त होती हैं। हमलोगों में जितनी भी मूलप्रवृत्तियाँ हैं वे सब हमारे पूर्व पुरुषों में भी विद्यमान थीं और उन्हीं से हमें प्राप्त हुई हैं। पक्षी के बच्चे को घोंसला बनाने का ढंग सिखलाया नहीं जाता, बल्कि उसकी योग्यता उसमे पहले ही से विद्यमान रहती है।

(४) मूलप्रवृत्ति जटिल (Complex) होती है, क्योंकि एक मूलप्रवृत्ति में कई प्रकार की प्रतिक्रियाएँ सम्मिलित रहती हैं।

(५) मूल प्रवृत्त्यात्मक क्रिया बहुत देर तक होती रहती है और कभी कभी महीनों तक होती रहती है। जब पक्षी में घोंसला बनाने की मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया होती है तो पहले वह घोंसला बनाने के साधनों को इकट्ठा करता है, फिर घोंसला बनाना आरंभ करता है।

(६) मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया से किसी ध्येय की पूर्ति होती है और वह ध्येय जीवन रक्षा इत्यादि में सहायक होता है।

(७) मूलप्रवृत्तियों के प्रकाशन के ढंग में आवश्यकता पड़ने पर परिवर्त्तन भी होता है।

Q. 102 How is a reflex-action distinguished from an instinctive action? State the characteristics of instincts. (1947S)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७७ सन् १९४५ A देखें।

Q. 103 Explain instinct and describe its various characteristics.

जब एक जाति के जीव समान शरीर रचना होने के कारण एक ही प्रकार की क्रिया करते हैं तो उस प्रकार की क्रिया को मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया कहते हैं। मूलप्रवृत्ति एक जन्मजात मानसिक प्रवृत्ति (Tendency) है जो प्राणी को किसी परिस्थिति के उपस्थित होने पर स्वरक्षा (self-preservation) या जातिरक्षा के लिए किसी विशेष प्रकार की क्रिया करने के लिए बाध्य करती है, परन्तु उस क्रिया के करने से जिस ध्येय की पूर्ति होती है उसका ज्ञान प्राणी को नहीं रहता है। सभी जीवों में मूलप्रवृत्तियाँ पाई जाती हैं। निम्न जीवों की प्रायः सभी प्रकार की क्रियाएँ मूलप्रवृत्त्यात्मक ही होती हैं, लेकिन मनुष्यों की मूलप्रवृत्तियों में संशोधन भी होता है। मेकडुगल का कहना है

कि मूलप्रवृत्तियों में मानस जीवन के तीनों पहलू विद्यमान रहते हैं। उसके अनुसार जीव किसी खास चीज पर अपना ध्यान देकर किसी विशेष प्रकार के संवेग का अनुभव करता है और किसी प्रकार की क्रिया करता है। यह सब मूलप्रवृत्ति के ही फलस्वरूप होता है। मधुमक्खियाँ अपना छत्ता तथा पक्षी अपना घोंसला मूलप्रवृत्ति के ही कारण बनाता है। मैकडुगल ने १४ प्रकार की मूलप्रवृत्तियों का उल्लेख किया है और उसका कहना है कि प्रत्येक मूलप्रवृत्ति से एक विशेष संवेग आबद्ध रहता है। मूलप्रवृत्ति की शक्ति जीवन में अर्जित नहीं की जाती है, बल्कि इसकी योग्यता पहले ही से विद्यमान रहती है। एक ही प्रकार की मूलप्रवृत्ति एक जाति के सभी जीवों में पाई जाती है। जब मुर्गी का बच्चा उत्पन्न होता है तो उसे दाना चुगना सिखलाया नहीं जाता, बल्कि उसकी योग्यता उसमें पहले से ही विद्यमान रहती है। हाँ, कुछ मूलप्रवृत्तियाँ जीव में अवसर विशेष पर आविर्भूत होती हैं और कुछ दिन के बाद शान्त भी हो जाती हैं, जैसे, काम वासना की मूलप्रवृत्ति, इत्यादि। हँसना, युद्ध करना, समूह में रहना और प्यार करना आदि मूल-प्रवृत्त्यात्मक क्रियाएँ हैं।

मूलप्रवृत्ति की विशेषताओं के लिए प्रश्न नम्बर ७७, १९४५ A देखें।

Q 101 What is a reflex-action? Point out its diffierent characteristics.

विचार रहित तात्कालिक (Immediate) स्थानीय (Local) प्रतिक्रिया (Response) को सहजक्रिया कहते हैं। जब कोई सांवेदनिक (Sensory) उत्तेजना (Stimulus) किसी इन्द्रिय के सम्पर्क में आती है तो उसके फल स्वरूप तुरत ही किसी प्रकार की तात्कालिक स्नायविक (Muscular) प्रतिक्रिया होती है। इसी क्रिया को सहजक्रिया कहते हैं। जब हमारी नाक में कोई बाहरी चीज पड़ जाती है तो तुरत ही हमें छींक आ जाती है। छींक आने की क्रिया विचार युक्त नहीं होती है— यह इतनी वेगमय (Impulsive) होती है कि विचार करने का मौका ही नहीं मिलता। ऐसी क्रिया में शरीर का कोई खास हिस्सा काम करता है और क्रिया भी सहसा होती है। इस प्रकार की क्रिया का नियंत्रण करना असंभव है। कुछ सहज क्रियाएँ ऐसी होती हैं जिनका ज्ञान हमें बाद में हो जाता है, लेकिन कुछ ऐसी भी सहजक्रियाएँ हैं जिनका हमे कुछ भी ज्ञान नहीं होता है। हाँ, ये क्रियाएँ बाहरी और भीतरी दोनो प्रकार की उत्तेजनाओं से होती हैं। इन क्रियाओं को करने की योग्यता जीव में जन्म से ही रहती है और उनके करने का ढंग भी हमेशा एक ही रहता है। छींकना, लार आना, पुतली का घटना या बढ़ना और खाँसना आदि को सहजक्रिया कहते हैं।

सहजक्रिया की विशेषताओं का वर्णन करने के लिए इस बात को व्यक्त कर देना आवश्यक है कि सहजक्रिया के करने

से जिस प्रयोजन की सिद्धि होती है उसकी चेतना पहले से प्राणी को नहीं रहती।

दूसरी विशेषता इसकी यह है कि सहजक्रिया सदा एक ही प्रकार की होती है। उसके करने के ढंग में कभी परिवर्त्तन नहीं होता है। छींकने या खाँसने की क्रिया हमेशा एक ही तरह की होती है।

सहजक्रियाएँ जन्मजात होती हैं, उन्हें जीवन के अनुभव से सीखा नहीं जाता है। जब बच्चा पैदा होता है तो कुछ ही दिन बाद पलक गिराने लगता है। इसकी योग्यता उसमें पहले से ही मौजूद रहती है। इसी प्रकार और भी क्रियाओं की योग्यता उसमे पहले से ही रहती है।

सहजक्रियाएँ तात्कालिक और सरल (Immediate and simple) होती है। सहजक्रियाओं के होने मे देर नहीं लगती। ज्योंही उत्तेजना मौजूद होती है त्योंही वह हो जाती है, जैसे छींकना और खाँसना आदि।

ये क्रियाएँ स्थानीय (Local) होती हैं, अर्थात् सहजक्रिया में शरीर का सम्पूर्ण भाग काम नहीं करता, बल्कि खास हिस्सा काम करता है।

अन्तिम विशेषता सहजक्रिया की यह है कि इसे हम नियंत्रित नहीं कर सकते। जब छींक होती है तो चेष्टा करने पर भी वह नहीं रुकती है। इसी तरह अन्य क्रियाओं का भी होता है। प्रायः ये ही सहजक्रियाओं की मुख्य विशेषताएँ हैं।

Q. 105 —What is instinctive action? Do human beings or animals act by instinct.

इस प्रश्न के पहले भाग के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १०३ का उत्तर पढ़िये।

दूसरे भाग का उत्तर देने के लिये यह व्यक्त कर देना जरूरी है कि मनुष्य तथा जानवर दोनो में मूलप्रवृत्तियाँ विद्यमान रहती हैं, लेकिन मनुष्य में बुद्धि जानवरों की अपेक्षा अधिक होती है। अतएव जब मनुष्य समाज में पड़ता है तब वह समाज में अपने को अच्छी तरह अभियोजित करने के लिये अपनी मूल-प्रवृत्तियो को संशोधित करके किसी प्रकार की क्रिया करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य का व्यवहार मूलप्रवृत्यात्मक न होकर प्रायः बुद्ध्यात्मक होता है।

जहाँ तक जानवरो का सम्बन्ध है उनके विषय मे यही कहा जा सकता है कि उनमे बुद्धि का अभाव रहता है और उनकी सभी क्रियायें प्राय. मूलप्रवृत्यात्मक ही होती हैं। बन्दरों या अन्य कुछ जानवरो के एकाध ही व्यवहार ऐसे होते हैं जिन्हें हम कुछ अंश तक बुद्ध्यात्मक कह सकते हैं। चिड़ियो का घोसला बनाना, कुत्तों का बिल्लियो का पीछा करना आदि सभी क्रियाएँ मूलप्रवृत्यात्मक ही होती हैं।

CHBPTER 12.

VOLUNTARY-ACTION.

Q. 106 What is meant by voluntary action?

Illustrate your answer by a concrete example. (1944 A)

जब मनुष्य किसी कार्य को किसी विशेष ध्येय प्राप्ति के लिए इच्छा पूर्वक करता है तो इस प्रकार के कार्य को ऐच्छिक क्रिया (Voluntary Action) कहते हैं। हम अपने जीवन में नित्य-प्रति कुछ न कुछ किया करते है, किंतु सभी प्रकार के कार्यों को ऐच्छिक क्रिया नहीं कह सकते हैं। ऐच्छिक क्रिया विचारयुक्त होती है और उस क्रिया से जिस ध्येय की प्राप्ति होती है उसका ज्ञान व्यक्ति को पहले से रहता है। प्रायः ऐच्छिक क्रिया उसी समय होती है जब कि एक ही समय में हमारे मन में कई इच्छाओं का आविर्भाव होता है और सभी अपनी संतृप्ति चाहती हैं। उस समय व्यक्ति अपने मन में सब इच्छाओं के गुणदोषों पर विचार करता है और उनमें से जो इच्छा विशेष श्रेयस्कर मालूम होती है उसको संतुष्ट करने के लिए वह किसी विशेष प्रकार की क्रिया करता है।

जब हम किसी प्रकार की कमी (want) अपने में अनुभव करते हैं तो उस समय उस अभाव को दूर करने के लिए हमारे मन में इच्छा का आविर्भाव होता है। यदि एक समय में एक ही इच्छा उत्पन्न होती है तो उसकी संतृप्ति तो बहुत जल्द किसी झंझट के विना हो जाती है, लेकिन यदि एक ही समय में कई इच्छाएँ आविर्भूत हो जाती हैं तो उस समय हमारे स्व (self) को विचार करने की जरूरत पड़ जाती है। बहुत उधेड़-

चुन करने के बाद तो किसी एक इच्छा की तृप्ति के लिए वह किसी क्रिया को करता है। इसे अच्छी तरह समझने के लिए विभिन्न अवस्थाओं का उल्लेख करना आवश्यक है।

ऐच्छिक क्रिया का यदि हम विश्लेषण करें तो हमें मालूम होगा कि पहले पहल मनुष्य किसी प्रकार के अभाव को महसूस करता है जिसके कारण कि उसे बहुत दुःख होता है। परन्तु जब वह यह सोचता है कि वह उस अभाव को दूर कर देगा तो उसे प्रसन्नता भी होती है। वस्तुतः अभाव की अवस्था में उसमे दुःखद भावना की विशेषता रहती है

इसके बाद उस अभाव को दूर करने के लिए उसके मन में इच्छा होती है। यह इच्छा विचार विहीन नहीं होती है, बल्कि विचार युक्त होती है। जब इच्छा उत्पन्न होती है तो उसके साथ-साथ जिसमे अभाव दूर हो सकता है उसका तथा उसको प्राप्त करने के साधन का भी ज्ञान रहता है। यदि प्रयोजन एक ही रहना है तो निर्णय करने में देरी नहीं होती और इच्छा क्रिया रूप मे परिणत हो जाती है। परन्तु यदि प्रयोजन एक से अधिक रहता है तो निर्णय करने मे देरी हो जाती है, क्योंकि विभिन्न प्रयोजनों में संघर्ष छिड़ जाता है। मान लीजिए आप पढ़ने की कमी को महसूस करते है और आप में पढ़ने की इच्छा उत्पन्न होती है और आप पढ़ना आरम्भ कर देते हैं।

जब एक ही साथ कई इच्छाएँ उत्पन्न हो जाती हैं तो सब को एक साथ संतुष्ट करना असंभव हो जाता है। उस समय

एक द्वन्द्व मच जाता है जिसे इच्छा संघर्ष (Conflict of motives) कहते हैं। इच्छाओं में संघर्ष इसलिए हो जाता है कि सबके प्रयोजन भिन्न-भिन्न होते है और सभी इच्छाएँ अपने प्रयोजन को प्राप्त करना चाहती हैं। उस समय व्यक्ति कुछ निश्चित करने में असमर्थ हो जाता है। मान लें किसी विद्यार्थी के मन मे पढ़ने की भी इच्छा है और सिनेमा देखने की भी। वह दोनों काम साथ-साथ नहीं कर सकता, क्योंकि दोनों के प्रयोजन भिन्न-भिन्न हैं, इसलिए वह द्विविधा में पड़ जाता है।

द्विविधा की अवस्था उपस्थित होने पर हमारा स्व किसी एक कार्य को नहीं कर बैठता और न तो शांत ही हो जाता है, बल्कि विभिन्न इच्छाओं, उनके प्रयोजनों और साधनों के गुणदोष पर विचार करना आरंभ कर देता है जिसे विचारणा (Deliberation) कहते हैं। विचारणा की हालत में हमारा स्व खूब अच्छी तरह से छानबीन करता है कि किसमें क्या गुण या दोष है और उसके लिए सबसे श्रेयस्कर कौन है। मान लें सिनेमा देखने की इच्छा और पढ़ने की इच्छा मे संघर्ष है। इस संघर्ष के समय इन दोनों इच्छाओं के गुण-दोषों की तुलना करेगा और यदि पढ़ने की इच्छा विशेष श्रेयस्कर मालूम हुई तो वह इसी को अपनावेगा।

जब विचारणा के द्वारा सभी इच्छाओं पर विचार कर लेता है तब उन में से किसी एक को चुन लेता है। कई इच्छाओं में से किसी एक को चुन लेने की क्रिया को निर्णय (Decision)

कहते हैं। जबतक विचारणा की अवस्था रहती है तबतक यह नहीं मालूम होता है कि स्व किसे चुनेगा और किसे नहीं। यह तो निर्णय के द्वारा निश्चित होता है। जब एक इच्छा के लिए हमारा स्व निर्णय कर लेता है तो उसे क्रिया रूप में परिणत करने का प्रयास करता है। ऊपर के उदाहरण में दोनों प्रकार को इच्छाओं पर विचार करने के बाद पढ़ने को इच्छा को चुन लेना निर्णय है।

कभी-कभी निर्णय क्रिया रूप में शीघ्र ही परिणत हो जाता है, लेकिन कभी-कभी ऐसा होता है कि मन की चंचलता के कारण निर्णय को क्रिया रूप में परिणत होने मे देरी होने लगती है। उस समय हमारे मन में संकल्प (Resolution) की क्रिया होती है जिसका मतलब होता है, किए हुए निर्णय पर डटा रहना। संकल्प के बाद हमारा निर्णय कार्यान्वित होता है। उपयुक्त सभी प्रक्रियाएँ ऐच्छिक क्रिया को मानसिक अवस्था (Mental-stage) कहलाती हैं। ऊपर के उदाहरण में पढ़ने पर डटा रहना संकल्प है।

इसके बाद शारीरिक अवस्था (Bodily stage) में संकल्प इतना शक्तिशाली बन जाता है कि वह शारीरिक क्रिया में परिणत हो जाता है और किसी विशेष प्रकार की क्रिया होती है। ऊपर के उदाहरण में जब पढ़ना प्रारम्भ हो जाता है तो यह शारीरिक अवस्था है।

इसके बाद फल की बाह्य अवस्था (The external stage

of consequences) में शारीरिक क्रिया से बाहरी वातावरण में तबदीली आती है, उसे फल कहते हैं। इसी अवस्था में प्रयोजन का साक्षात्कार होता है और इच्छा की संतृप्ति होती है।

Q. 107 Describe the mental processes involved in deciding to go to the study room rather than to the cinema. (1945 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ८१ सन् १९४४ A देखें।

Q. 108 Explain conflict of motives, Deliberation and choice. (1945S)

इसके उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ८१ सन् १९४४ A देखें।

Q. 109 Analyse with the help of example, the processes which comprise voluntary activity. (1946 A.)

इस प्रश्न के लिए प्रश्न नम्बर ८१ सन् १९४४ A देखे।

Q, 110 What do you understand by conflict of motives? How can an individual get out of such a conflict? (1947 S).

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ८१ सन् १९४४ A का उत्तर देखें।

Q. 111 Give an analysis of the processes of voluntary action with an example. (1948 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ८१ सन १९४४ A देखें।

VOLUNTARY ACTION

Q. 112 State the circumstances in which it becomes necessary to deliberate before doing any thing. Analyse the process of deliberation and choice. (1949 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १०५ का उत्तर पढ़ें।

Q. 113 What do you understand by motive? How is the conflict of motives resolved? (1949 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १०५ का उत्तर देखें।

Q 114 Distinguish voluntary action from Instinctive action. Illustrate with examples. (4950 A.)

मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया (Instinctive action) और ऐच्छिक क्रिया (Voluntary action) के अन्तरों को व्यक्त करने के लिये निम्नांकित बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

(१) ऐच्छिक क्रिया (Voluntary action) के करने से जिस ध्येय की पूर्ति होती है उसका ज्ञान जीव को पहले से ही रहता है, क्योंकि किसी ध्येय को पहले से निश्चित करके ही तो किसी प्रकार की ऐच्छिक क्रिया की जाती है।

मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया (Instinctive action) से जिस

ध्येय की प्राप्ति होती है उसका ज्ञान प्राणी को क्रिया करते समय नहीं रहता, क्योंकि इसका आविर्भाव किसी उत्तेजना विशेष के उपस्थित होने पर सहसा होता है।

जब कोई विद्यार्थी रात में देर तक पढ़ता है तो वह यह भी समझता है कि उसके परिश्रम का परिणाम सुन्दर होगा, किंतु जब कोई बिल्ली चूहे का पीछा करती है तब उसे यह ज्ञान नहीं रहता कि पीछा करने से चूहा के मिलने पर उसकी क्षुधा शान्त होगी वह तो चूहा को देखती है और दौड़ना शुरू कर देती है।

ऐच्छिक क्रियाओं को करने के ढंग में नवीनता आती रहती है, क्योंकि कार्यप्रणाली में बराबर परिवर्तन होता रहता है। किंतु मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया के करने का ढंग हमेशा एक ही रहता है, क्योंकि उसके ढंग मे परिवर्तन नहीं होता। जब विद्यार्थी अपने विषय को पढ़ता है तब वह बैठकर बोलबोल कर भी पढ़ता है और कभी सोकर भी धीरे-धीरे मन में पढ़ता है, लेकिन जब पक्षी अपना घोंसला बनाता है तो उसके बनाने का ढंग एक ही रहता है।

ऐच्छिक क्रिया मे जब किसी प्रकार का विघ्न पड़ता है तब हम अपनी सारी शक्ति को बटोरकर उस क्रिया को करना आरंभ कर देते हैं, लेकिन मूल प्रवृत्त्यात्मक क्रिया मे अभियोजन की प्रबलता की आवश्यकता कभी नहीं पड़ती। जब पढ़ते समय व्याघातक उत्तेजनाएँ हमें प्रभावित करती हैं तो हम अपना ध्यान चारों ओर से खींचकर उसी पर लगा देते हैं, किंतु कोई

पक्षी घोंसला बनाते वक्त ऐसा नहीं करता। वह तो समान शक्ति से ही घोंसला बनाने में तल्लीन रहता है।

ऐच्छिक क्रिया में अभियोजन की विशालता रहती है, परन्तु मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रिया में अभियोजन की विशालता नहीं रहती। इसी प्रकार से इन दोनों प्रकार की क्रियाओं से और भी अन्तर दिखलाए जा सकते हैं, जैसे ऐच्छिक क्रिया विचार युक्त होती है परन्तु मूल प्रवृत्त्यात्मक क्रिया विचार शून्य होती है, इत्यादि।

CHAPTER 13

PERSONALITY

Q. 115- Give a short account of the factors which determine the personality of an individual. (1947 A.)

व्यक्तित्व (Personality) निम्नांकित अंगों (Factors) पर निर्भर करता है

(१) शरीर रचना (Physique)।

(२) बुद्धि (Intelligence)।

(३) संवेगात्मक जीवन (Emotionality)।

(४) सामाजिकता (Sociability) :

(१) शरीर रचना (Physique) शरीर रचना का प्रभाव मनुष्य के व्यक्तित्व पर बहुत अधिक पड़ता है। शरीर रचना के अन्तर्गत उसकी लम्बाई, रूप-रंग और वेश-भूषा सभी आ जाते हैं। जो मनुष्य शरीर का लम्बा और हट्टा कट्टा होता है

उसका प्रभाव अन्य लोगों पर बहुत पड़ता है। शरीर यदि देखने मे सुडौल और सुन्दर मालूम होता है तो उसे देखकर दूसरे लोग भी मुग्ध हो जाते है। जो व्यक्ति कद का नाटा और देखने मे कुरूप होता है, उसकी परवाह कोई नहीं करता है। जिसके शरीर मे किसी प्रकार की कमी नहीं रहती है उसमें अहंभाव अधिक रूप में रहता है और किसी को अपने सामने नहीं लगाता है, किंतु जिस मनुष्य मे किसी तरह का शारीरिक दोष रहता है वह हीनता की भावना (Feeling of Inferiority) से बराबर पीड़ित रहता है और फलस्वरूप वह अपने को अन्य लोगो से छोटा समझने लगता है। वेशभूषा का भी असर व्यक्तित्व पर कम नहीं पड़ता है। जो सुन्दर कपड़े पहनते हैं वे गन्दे रहने वालो की अपेक्षा दूसरों को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं। तात्पर्य यह कि व्यक्तित्व विकास में शरीर-रचना का विशेष हाथ रहता है।

(२) बुद्धि (Intelligence) बुद्धि, व्यक्तित्व का बहुत ही प्रधान अंग है। शरीर रचना का प्रभाव तो व्यक्तित्व पर अस्थायी रूप से पड़ता है, किंतु बुद्धि का असर स्थायी है। यदि मनुष्य में शारीरिक अभाव किसी प्रकार का हो, किन्तु उसमें बुद्धि हो तो उसका व्यक्तित्व बहुत ही विकसित होता है। कोई कितना सुन्दर क्यो न हो, लेकिन यदि उसमें बुद्धि का अभाव है तो वह दूसरों पर अपना असर नहीं डाल सकता, लेकिन कुरूप आदमी भी अपनी बुद्धिमानी के कारण लोगों को हैरत में

डाल देता है। बुद्धि के ही बदौलत अपने को अभियोजित करने में समर्थ होता है। सुना जाता है कि सुकरात (Socrates) अत्यन्त कुरूप था, लेकिन वह बुद्धिमान इतना था कि लोग उसकी धाक मानते थे। इस प्रकार हम देखते है कि बुद्धि, व्यक्तित्व का प्रमुख अङ्ग है।

(३) संवेगात्मक जीवन (Emotionality) मनुष्य के संवेगात्मक जीवन का भी प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर कम नहीं पड़ता है। जिस मनुष्य का स्वभाव हँसमुख रहता है उसका असर और लोगों पर बहुत ही अधिक पड़ता है और सभी लोग उसे चाहते हैं, परन्तु जो मनुष्य स्वभाव का चिड़चिड़ा और उदास रहने वाला होता है उससे सभी लोग असंतुष्ट रहते हैं और उसकी कोई परवाह भी नहीं करता है। यहाँ, इस स्थल पर यह ध्यान रखने योग्य है कि मनुष्य का संवेगात्मक जीवन कण्ठपिण्ड (Thyroid), उपकंठपिंड (Parathyroid, मूत्रस्थपिंड (Adrenal gland) और पियूषग्रंथि (Pituitary gland) पर निर्भर करता है। इन्हीं पिण्डों मे अन्तर पड़ने के कारण मनुष्य के स्वभाव मे भी अन्तर पड़ता है।

(४) सामाजिकता (Sociability) उपर्युक्त अंगों का प्रभाव व्यक्तित्व पर अप्रत्यक्षरूप से (Indirectly) पड़ता है, लेकिन समाज का प्रभाव मनुष्य के व्यक्तित्व पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। मनुष्य के विचार, व्यवहार और उसके आदर्शादि उसके समाज के ही अनुरूप होते हैं। मनुष्य जैसे समाज मे

रहता है वैसे ही उसके व्यक्तित्व का निर्माण भी होता है। सबसे पहले व्यक्तित्व पर माता पिता और घर वालों का प्रभाव पड़ता है और तब उसके बाद महल्लेवालो और पुरवालों का। यदि समाज अच्छा रहता है तो व्यक्तित्व अच्छी तरह विकसित होता है और यदि समाज दूषित रहता है तो व्यक्तित्व का विकास नहीं होता है। जो माता-पिता लड़कपन में अपने बच्चे की अनावश्यक सावधानी नहीं रखते वह बच्चा स्वावलम्बी तथा कठिनइयों को झेलने वाला होता है, किन्तु जो माता पिता मूर्खतावश बच्चे को खुद करने के लिए मौका नहीं देते, वह भविष्य में निकम्मा और पराश्रित रहने वाला बन जाता है। प्राय वीरों के लड़के वीर और विद्वानो के लड़के विद्वान् हुआ करते हैं यह सब समाज के ही फलस्वरूप होता है। धार्मिक-विचार, रहन-सहन और अन्य अर्जित गुण हमलोग समाज से ही प्राप्त करते है। थोड़े शब्दों में यही कहा जा सकता है कि समाज का असर मनुष्य के व्यक्तित्व पर बहुत ही गहरा पड़ता है।

Q. 116 Explain the biological and social factors in the formation of personality. (1948 A.)

इस प्रश्न के लिए प्रश्न नम्बर ८७ सन् १९४७ A. देखे।

Q 117 What do you understand by the term personality? Explain the social factors in the formation of personality (1948 S.)

व्यक्तित्व की परिभाषा भिन्न-भिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने-

अपने ढंग से की है। कुछ लोग व्यक्तित्व का प्रयोग मनुष्य के रूप-रंग (Physique) के अर्थ में करते है, लेकिन उनका ऐसा करना ठीक नहीं है। कुछ मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व शब्द का प्रयोग मानसिक गुणों (Mental-ability) के अर्थ में करते हैं, परन्तु यह दृष्टिकोण भी मान्य नहीं है। इस प्रकार हम देखते है कि कुछ-लोग आन्तरिक पहलुओं पर जोर देते हैं और कुछ लोग बाहरी पहलुओं पर, लेकिन सच्ची बात तो यह है कि व्यक्तित्व मनुष्य के बाहरी या भीतरी गुणों का समुच्चय (Sum) मात्र नहीं है। व्यक्तित्व में उसके सभी जन्मजात (Inborn) और अर्जित (Acquired) गुणों का सामंजस्य रहता है। हम उसमें से किसी को भी अलग नहीं कर सकते है। जितने भी शीलगुण (Traits) मनुष्य के होते है वे सभी उसके व्यक्तित्व में इस प्रकार से संगठित (Organized) रहते हैं कि उनमें किसी प्रकार का परिवर्त्तन हमलोग नहीं ला सकते। जब इन-शीलगुणों का विच्छेद (Dissociation) होता है तो मनुष्य असाधारण (Abnormal) हो जाता है। अतएव हमलोगों को व्यक्तित्व से मनुष्य के स्वाभाविक और अर्जित शीलगुणों का संगठन समझना चाहिए जिसकी वजह से वह अन्य लोगों को प्रभावित करता है। व्यक्तित्व वही है जिसके कारण हमें किसी मनुष्य की उपस्थिति (Presence) और अनुपस्थिति (Absence) का ज्ञान होता है। कुछ लोगों की धारणा है कि जो मनुष्य समाज में रहता है उसीमें व्यक्तित्व होता है, दूसरे में

नहीं; परन्तु उनकी यह धारणा गलत है। सच्ची बात तो यह है कि व्यक्तित्व सभी लोगों में होता है, लेकिन उसका पूर्ण विकास समाज में ही होता है।

दूसरे भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ८७ सन् १६४७ A देखें।

Q. 118 What do you mean by personality? Describe the different types of personality.

पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ८६ सन् १६४= A. देखें।

प्राचीन काल से ही लोगों ने मनुष्यों को व्यक्तित्व प्रकार में बाँटने की कोशिश की है, लेकिन हम यहाँ युंग (Yung) के ही व्यक्तित्व प्रकार का वर्णन करेंगे। युंग ने मनुष्यों को दो प्रकार में विभाजित किया है (१) बहिर्मुखी (Extroverted) और (२) अन्तर्मुखी (Introverted)।

जो मनुष्य बहिर्मुखी वर्ग (Type) का होता है उसकी रुचि हमेशा सामाजिक चीजों में होती है। वह समाज में ही रहना पसन्द करता है और हमेशा सभा-सोसायटी में भाग लेता है। वह सदा अपने को समाज के अनुकूल बनाए रखता है। मित्रों में उसकी रुचि बहुत रहती है- जहाँ कहीं भी जाता है वहाँ दो-चार मित्रों को बना लेता है। अकेला रहना वह कभी नहीं पसंद करता है। वह लोगों से बहुत ही दिल खोलकर मिलता है और सबके आदर्शों का उचित सम्मान करता है। इस प्रकार

का आदमी नेता (Leader), समाज सुधारक और समाज के अन्य कार्यों में हाथ बटानेवाला होता है।

अन्तर्मुखी व्यक्ति का स्वभाव वहिर्मुखी के ठीक प्रतिकूल होता है। वह समाज में रहना पसंद नहीं करता है और अपने विचारों को दूसरों के सामने प्रगट करने में लज्जा की अनुभूति करता है। वह दूसरों की परवाह कभी नहीं करता है, इसलिए दूसरे भी उसकी परवाह नहीं करते। उसे मित्रों का अभाव रहता है और वह एकांत प्रेमी होता है। एकान्त उसके स्वास्थ्य के लिए भी आवश्यक होता है। इस प्रकार का व्यक्ति बहुत ही चितनशील होता है और नया-नया आविष्कार करता है। वैज्ञानिक और दार्शनिक इत्यादि इस प्रकार के होते हैं।

जिस मनुष्य में दोनों प्रकार के गुण पाए जाते हैं उसे उभयमुखी (Ambivert) कहते हैं। प्रायः मनुष्य उभयमुखी होता है. क्योंकि कुछ अंश तक तो वह सामाजिक चीजों मे रुचि रखता है और कुछ अंश तक अपने आप मे। उपर्युक्त दोनो प्रकार के व्यक्ति संसार में बहुत कम मिलते हैं, लेकिन उनका अभाव नहीं है।

Personality

Q. 119 Describe the elements of Personality (1950 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ११५ का उत्तर देखें।

CHAPTER 14

LEARNING

Q 120 Distinguish between human and animal earning, using examples of both. (1944 A)

छोटे जीवों से लेकर मनुष्यों तक सभी कुछ न कुछ जीवन में सीखते रहते हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि छोटे जीव बहुत ही कम सीखते हैं, लेकिन मनुष्य बहुत ही अधिक सीखता है। अन्य प्राणी अपना काम मूलप्रवृत्ति इत्यादि के आधार पर चलाते हैं, लेकिन मनुष्य सामाजिक प्राणी होने के कारण बहुत कुछ सीखता है। यदि वह अपने आचरण को मूलप्रवृत्तियों के प्रवाह में बहा दे तो उसका सामाजिक जीवन कठिन हो जाएगा। हम मनुष्यों के व्यवहार प्रायः सीखने के ही फल-स्वरूप होते हैं। अब प्रश्न यह होता है कि मनुष्य और जानवर के शिक्षण (Learning) में क्या अन्तर है?

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए हमें यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि मनुष्य विश्व का सर्वशक्तिमान जीव है। जितनी योग्यताएँ इसमें मौजूद हैं उतनी अन्य किसी जानवर में नहीं। इस कारण मनुष्य तथा अन्य जानवरों के सीखने में अन्तर होना स्वाभाविक है। अब हम इन दोनों के शिक्षण (Learning) में निम्नांकित अन्तर व्यक्त कर सकते हैं

सीखते वक्त आदमी किसी स्थिति (Situation), चीज (object) और जगह (place) की देखभाल (Observation) अन्य

जानवरों से अच्छा करता है। जब मनुष्य किसी नई स्थिति में रख दिया जाता है तो वह उसका अध्ययन सूक्ष्म दृष्टि से करता है, लेकिन जानवर ऐसा नहीं करता। यदि हम किसी आदमी को भ्रांतिबक्स (Puzzle-box) में रख दें तो वह उससे बाहर निकलने के लिए उस बक्स का बहुत ही सावधानी से अध्ययन करेगा, क्योंकि उसमें विचार शक्ति अधिक है, लेकिन जानवर उस परिस्थिति का अध्ययन पूर्ण रूपेण नहीं कर सकता। चूंकि जानवर की बुद्धि मनुष्य सी नहीं होती, अतएव वह उसका अध्ययन बखूबी नहीं कर सकता। इसका नतीजा यह होगा कि आदमी अधिक दोष किए बिना ही उस बक्स को खोलकर बाहर निकलना सीख जाएगा, परन्तु जानवर को बाहर निकलना सीखने के लिए बहुत ही दोष करने पड़ेंगे।

मनुष्य जब कुछ सीखता है तो वह अपने सीखने के लिए विचारणा (Deliberation) और नियन्त्रणादि का इस्तेमाल करता है, लेकिन जानवर ऐसा करने में कामयाब नहीं होता है। कोहलर ने बन्दरों पर प्रयोग (Experiment) करके अन्तर्दृष्टि द्वारा (Learning by insight) सीखने के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है। वह जब केले को ऊपर एक डाली से बांध दिया तो उसका बन्दर उस समय तक उस केले को लेकर खा नहीं सका जबतक कि वह स्वयं उसे बक्सों की मदद लेने के लिए संकेत न कर सका। यदि आदमी पर वह इस प्रयोग को करता तो इसे बक्सों की मदद लेने का संकेत करना नहीं

पड़ता। मनुष्य स्वतः विचार द्वारा परिस्थिति को अपने अनुकूल नियंत्रित कर लेता। जब आदमी को भूल-भूलैया में रख दिया जाता है तो वह विचारणा के द्वारा असली रास्ते से जीना सीख जाता है और अपने गलत व्यवहारों का यथाशक्ति नियंत्रण करता है।

सीखते समय मनुष्य अपने चिंतन के द्वारा अनुपस्थित विषयों का भी विचार करता है, लेकिन जानवर जो चीज उसके सामने मौजूद नहीं रहती है उस पर विचार नहीं करता। थार्नडाइक या कोहलर के प्रयोग इस बात को अच्छी तरह से प्रमाणित करते हैं। यदि मनुष्य किसी नई परिस्थिति में रख दिया जाता है तो वह गत तथा भविष्य दोनों का चिंतन करता है।

सीखने में मनुष्य नाम (Name), भाषा (Language) और संख्या का भी प्रयोग करता है, लेकिन जानवर इन सबका प्रयोग नहीं करता है। प्रयोग करके ऐसा देखा गया है कि जब मनुष्य क्रिया द्वारा कुछ सीखता है तो वह भाषा का भी प्रयोग करता है और अपने दोषों को गिनता भी रहता है। मान लीजिए, कोई आदमी भूल-भुलैया के ठीक रास्ते को जानना चाहता है। इसके लिए वह जितनी बार कोशिश करता है उतनी बार वह अपनी गलतियों को भी गिनता रहता है। मनुष्यों पर सभी प्रकार के शिक्षण प्रयोग किए गए हैं और उन सब में ये बातें पाई गई हैं।

आदमी किसी चीज को बहुत जल्दी सीख लेता है, लेकिन

जानवर बहुत देरी से सीखता है। प्रयोग करके ऐसा देखा गया है कि जिस चीज को आदमी जल्द से जल्द सीख लेता है उसी को जानवर बहुत देर के बाद सीखता है। कहने का अभिप्राय यह है कि यदि विचार किया जाय तो मालूम होगा कि मनुष्यों का सीखना हर तरह से जानवरों की अपेक्षा उच्चकोटि का होता है, क्योंकि मनुष्य बुद्धि से अधिक काम लेता है, परन्तु जानवर में विशेष बुद्धि का अभाव रहता है, इसलिए उसका किसी प्रकार का सीखना प्रायः क्रियात्मक ही होता है।

Q. 121 What is meant by, learning? Can all learning be treated as a blind trial-error process? (1944 S)

सीखने (Learning) का प्रयोग मनोवैज्ञानिकों ने कई अर्थों में किया है। कुछ लोगों का कहना है कि व्यवहार में किसी प्रकार का परिवर्त्तन या परिष्कार ही (Modification of behaviour) सीखना कहलाता है। अन्य मनोवैज्ञानिकों के अनुसार यदि किसी काम करने की योग्यता हम में आज नहीं है और कुछ दिन बाद हम में उस काम करने की योग्यता हो जाती है तो यह योग्यता सीखने से ही आती है। इसी प्रकार कई परिभाषाएँ सीखने की दी गई हैं, लेकिन सच्ची बात तो यह है कि हम जो कुछ भी अपने जीवन में अनुभव के द्वारा योग्यता अपने में लाते हैं वह सीखने से ही होता है। अगर किसी व्यक्ति को आज सायकिल चलाना नहीं आता है या किसी

विद्यार्थी को वर्णमाला के अक्षरों के लिखने का ढंग नहीं मालूम है और वही व्यक्ति या विद्यार्थी को सायकिल चलाना आने जाता है या उसे अक्षर लिखने का तरीका मालूम हो जाता है तो हम यह कहेंगे कि उसने सायकिल चलाना सीख ली है, इत्यादि। यदि कोई विद्यार्थी रोज-ब-रोज क्लास में देरी से आता है तो हम यही कहते हैं कि वह सबेरे आना नहीं सीख सका है। कहने का तात्पर्य यह है कि सीखना वह क्रिया है जिसके द्वारा हम किसी नए काम को करने की योग्यता प्राप्त कर अपने व्यवहार में किसी प्रकार की तब्दीली लाते हैं। लेकिन यहाँ यह नहीं भूलना चाहिए कि व्यवहार में परिवर्तन परिपक्वता (Maturation) के कारण भी आता है। अतएव परिपक्वता सीखने में सहायक होती है।

अब प्रश्न यह होता है, क्या क्रियात्मक सीखने का सिद्धान्त सभी प्रकार के शिक्षणों की व्याख्या कर सकता है ? इस प्रश्न का उत्तर देने के पहले हमलोगों को इस सिद्धान्त को जानना अत्यन्तावश्यक है।

थार्नडाइक (Thorndike) ने इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करने के लिए अनेक जानवरों (कुत्ता, बिल्ली और चूहा इत्यादि) पर प्रयोग किया और यह सिद्ध कर दिया कि हमलोगों के सभी प्रकार के शिक्षण (Learning) क्रियात्मक होते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार जब प्राणी (Organism) किसी नवीन परिस्थिति में पड़ता है तो उस परिस्थिति को अभियोजित

(Adjust करने के लिए वह अनायास (Random) व्यवहार करना आरंभ कर देता है। उसके इस व्यवहार में विचार नहीं रहता। इसी अनायास व्यवहार के अन्तर्गत उसे सहसा सफलता मिल जाती है। पुनः दूसरी बार उस परिस्थिति में रखे जाने पर उसके अनायास व्यवहार कम होते हैं, इस प्रकार बार-बार ऐसा करने पर उसके अनायास व्यवहार खतम हो जाते हैं और वह उचित व्यवहार करना सीख जाता है।

उसने एक बार एक चूहे को भूखा रखकर एक भूल भुलैया (Maze) में छोड़ दिया। उस भूल-भुलैया के बीच में खाना रखा हुआ था। उसके रास्ते इस प्रकार बने हुए थे कि अनुचित रास्ते से जाने पर चूहे को चोट लगती थी और ठीक पथ से जाने से भोजन मिलता था। जब चूहा पहले पहल उसमें छोड़ा गया तो वह गलत रास्ते से ही जाना आरंभ किया, इस प्रकार वह कई अनायास व्यवहारों का प्रदर्शन किया। अन्ततोगत्वा बहुत गलतियों के करने के बाद बहुत समय के बाद वह सहसा ठीक रास्ते पर गया और उसे खाना मिल गया। इस तरह उसे कई बार उस भूल-भुलैया में छोड़ा गया और अन्त में वह ठीक रास्ता से जाना सीख गया और उसे समय भी कम लगने लगा।

दूसरा प्रयोग उसने बिल्ली पर आंतिबन्धरा में किया और बिल्ली भी कई बार गलतियाँ करके अन्त में बिना दोष के दरवाजा खोलकर बाहर आना सीख गई। वस्तुतः यह सिद्धान्त बहुत

स्थलों पर मान्य है, जब हमलोग पहले पहल कोई कौशल सीखते हैं तो उसमें बहुत सी गलतियाँ होती हैं, लेकिन पुनरावृत्ति से वे गलतियाँ समाप्त हो जाती है। परन्तु थार्नडाइक का यह कहना कि ऐसे सीखने में विचार काम नहीं करता मान्य नहीं है, क्योंकि यदि विचार नहीं रहता तो गलतियों का बहिष्कार हमलोग क्योंकर करते। दूसरी बात यह है कि हमलोग बहुत सी चीजें क्रियात्मक नहीं सीखते, बल्कि (Insight) अन्तर्दृष्टि या सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन (Coditioned Reflex) के द्वारा सीखते है। इन शिक्षणों को व्याख्या उद्योग विधि के (Trial error-theory) सिद्धान्त पर नहीं कर सकते है। अतएव हम कह सकते है कि यद्यपि हमलोग बहुत कुछ जीवन में क्रियात्मक ही सीखते हैं, लेकिन सभी प्रकार का सीखना क्रियात्मक नहीं होता।

Q. 122 Distinguish between learned and unlearned modes of behaviour. (1946 S.)

यो तो मूलप्रवृत्त्यात्मक, सहजक्रियात्मक, स्वायत्तक्रियात्मक (antomatic action) इत्यादि सभी जन्मजात व्यवहार है। क्योंकि इन व्यवहारो को जीव (organism) अपने जीवन काल में अर्जित नहीं करता, बल्कि इन व्यवहारो के करने की शक्ति उसमें जन्म से ही रहती है। शिक्षणात्मक क्रियायें और अभ्यासजन्य क्रियायें जन्म से हमलोगों मे विद्यमान नहीं रहतीं, बल्कि इन क्रियाओं को करने की शक्ति हमलोगों मे जीवन के

अनुभव से प्राप्त होती है। किंतु, अनर्जित (unlearned) और अर्जित (learned) व्यवहारों के अन्तरों को व्यक्त करने के लिये हमलोग यहाँ मूलप्रवृत्त्यात्मक तथा सहजक्रियात्मक व्यवहारों और अर्जित व्यवहारो के अन्तरो को ही व्यक्त करेंगे।

इसके पहले कि हम, इन दो प्रकार के व्यवहारों का उल्लेख करें यह व्यक्त कर देना आवश्यक है कि हमारे अर्जित व्यवहारों के आधार (basis) भी जन्मजात क्रियायें ही हैं। यहाँ यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि अनर्जित व्यवहारों की योग्यता हमलोगों में जन्मजात (inborn) होती है। अर्थात् हम· लोगों में मूलप्रवृत्तियाँ पहले से ही विद्यमान रहती हैं। उनको करने के लिये किसी प्रकार के अनुभव की आवश्यकता नहीं पड़ती। चिड़ियों को घोंसला बनाना या उनके बनाने के लिये सामानों को इकट्ठा करना सिखलाया नहीं जाता, बल्कि इन कामों के करने की प्रवृत्ति ही उनमें विद्यमान रहती है। किंतु अर्जित क्रियाओं को हमलोग अपने जीवन के अनुभव से प्राप्त करते हैं। सायकिल पर चढ़ना, मोटर चलाना, हमलोग अपने जीवन के अनुभव से सीखते हैं।

अधिकांश, हमारे अनर्जित व्यवहार बिना किसी कठिनाई के होते हैं। लेकिन अर्जित व्यवहारों के करने में हमलोगों को कभी-कभी कठिनाई भी होती है। जब हममें छींकने की या खाँसने की सहजक्रिया होती है तो हमें ऐसा करने में किसी तरह की कठिनाई नहीं होती, वह आप से आप हो जाती है। किंतु

अर्जित क्रिया को करने में कभी-कभी कठिनाई भी होती है। यह भले ही है कि अभ्यास हो जाने से इन क्रियाओं का करना सरल हो जाता है।

अर्जित व्यवहार उद्योग-विधि (By trial and error) या अनुकरण (Imitation) या अन्तर्दृष्टि (Insight) इत्यादि द्वारा सीखे जाते हैं। किंतु अनर्जित व्यवहार इन विधियों से सीखे नहीं जाते।

प्रायः अनर्जित व्यवहारों में कोई परिवर्त्तन नहीं होता, लेकिन अर्जित क्रियाओं में हम इच्छानुसार परिवर्त्तन ला सकते हैं। सहजक्रिया या मूलप्रवृत्त्यात्मक क्रियाओं के करने का सदा एक ही ढंग रहता है, लेकिन सीखी हुई क्रियाओं के करने का ढंग कभी-कभी समय पाकर बदलता रहता है। यहाँ इस सम्बन्ध में यह स्मरणीय है कि मनुष्य की मूलप्रवृत्तियों का कालक्रम में परिवर्त्तन हो जाता है, लेकिन अन्य जीवों में यह परिवर्त्तन नहीं होता।

जन्मजात क्रियाओं के करने में बुद्धि या कभी-कभी चेतना की भी आवश्यकता नहीं पड़ती, लेकिन अर्जित व्यवहार सदा बुद्धि-युक्त एवं चेतना युक्त होते हैं।

अनर्जित व्यवहार यान्त्रिक (Machanical) होते हैं, लेकिन अर्जित व्यवहार यांत्रिक नहीं होते हैं। यहाँ हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि अभ्यासजन्य क्रियाएँ कुछ अंश में यान्त्रिक होती हैं, लेकिन अन्य अर्जित क्रियाएँ नहीं।

अनर्जित व्यवहारों को नियंत्रित करना कठिन है, लेकिन अर्जित व्यवहारों को नियंत्रित करना सरल है। हम छींकने को कभी नियंत्रित नहीं कर सकते, लेकिन किसी अर्जित क्रिया को बहुत ही आसानी से अपनी इच्छानुसार नियंत्रित कर सकते हैं।

अनर्जित व्यवहारों से जिस ध्येय की पूर्ति होती है उसका ज्ञान हमलोगों को अधिकांश नहीं रहता, किंतु अर्जित व्यवहारों से जिस ध्येय की पूर्ति होती है उसका ज्ञान हमलोगों को रहता है, क्योंकि वे व्यवहार उसीलिए किए जाते हैं।

अर्जित व्यवहारों का संस्कार नाड़ीतंत्र में रहता है, लेकिन अनर्जित व्यवहारों के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं होती है। इसके अतिरिक्त बहुत से अनर्जित व्यवहार स्थानीय (Local) होते हैं, लेकिन अर्जित व्यवहार स्थानीय नहीं होते हैं। प्रायः इन दो प्रकार के व्यवहारों मे ये ही मुख्यः अन्तर हैं।

Q. 123 What is learning ? Distinguish between human and animal learning. (1945 S.)

इस प्रश्न के पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ९२ सन् १९४४ S और दूसरे भाग के उत्तर के लिए १९४४ A देखें।

Q. 124 Is learning always a trial-error process ? Discuss the nature of learning.

इस प्रश्न के पहले भाग के उत्तर के लिए १९४४ A और दूसरे भाग के उत्तर के लिए १९४४ S देखे।

Q. 125 What is learning ? Distinguish bet-

ween human learning and animal learning. (1947 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर ६४ देखें।

Q. 126 Explain trial-error process of learning. Can all learning be treated as a trial-error process of learning. (1947 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६२ सन् १९४४ S देखें।

Q. 127 Describe the learning process. Give a theory of learning.

इस प्रश्न के पहले भाग के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६२ देखें।

यहाँ हम अन्तर्दृष्टि द्वारा सीखने (Learning by insight) के सिद्धान्त का वर्णन करेंगे।

थार्नडाइक के अनुसार जीव सभी कुछ क्रियात्मक सिद्धान्त के द्वारा सीखता है, पॉवलॉव सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन के द्वारा सीखने पर जोर देता है, लेकिन जेस्टालवादियों का कहना है कि प्राणी न तो उद्योग विधि के द्वारा सीखता है और न सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन के द्वारा सीखता है, बल्कि वह अन्तर्दृष्टि (Insight) के द्वारा सीखता है।

इस सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य या अन्य जीव अनायास व्यवहार (Random behaviour) करके मुनासिब प्रतिक्रिया (Right response) नहीं सीखता है, बल्कि बुद्धि द्वारा

सीखता है। यह सिद्धान्त सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन (Conditioned-Response) के सिद्धान्त को भी खण्डित करता है। थोड़े शब्दों में इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि जब किसी जीव को नई परिस्थिति में रख दिया जाता है तो वह बिना सोचे समझे किसी प्रकार का व्यवहार नहीं करने लगता है, बल्कि वह पूरी परिस्थिति का अध्ययन सूक्ष्म रूप से करता है। वह उसके प्रत्येक अवयवों के पारस्परिक सम्बन्ध को जानने की कोशिश करता है और पुनः उन अवयवों का सम्बन्ध उस पूरी परिस्थिति से स्थापित करता है। तत्पश्चात् वह उस परिस्थिति के अनुसार उचित प्रतिक्रिया करता है। इस सिद्धान्त के मुताबिक सभी प्रकार के शिक्षण अन्तर्दृष्टि के ही द्वारा होते हैं। कोहलर और कोफ्का का कहना है कि थार्नडाइक और पॉवलॉव के कुत्ते, बिल्ली भी इसी सिद्धान्त के द्वारा सीख सके। यदि उनमें परिस्थिति की सूझ न होती और बुद्धि न होती तो वे क्योंकर गलती रास्ते को छोड़कर ठीक रास्ते से जाते या घण्टी बजाने पर कुत्ते के मुंह से पानी आता। ये प्रक्रियाएँ ही इस बात को प्रतिपादित करती हैं कि उनमें अपनी परिस्थिति का पूरा ज्ञान था।

इस सिद्धान्त को विश्वजनीन बनाने के लिए कोहलर ने एक बन्दर पर प्रयोग किया। बन्दर को भूखा रखा गया और कुछ पके केले इस प्रकार से बाँध दिए गए कि बन्दर उसे कूद-फाँद कर पाने में असमर्थ था। बन्दर के अगल-बगल कुछ बक्स

रख दिए गए। बन्दर बहुत देर तक इधर-उधर कूदता फांदता रहा, लेकिन उसे केले प्राप्त नहीं हो सके। कुछ देर बाद प्रयोग-कर्त्ता ने क्रमशः बक्सों को एक दूसरे के ऊपर रखा और उस पर चढ़कर केले को स्पर्शमात्र किया। पुनः बक्सों को इधर-उधर तितर-बितर कर दिया। अब क्या था बन्दर को पूरी परिस्थिति समझ में आ गई और वह पुनः बक्सों को इकट्ठा करके केला तोड़ने का प्रबन्ध कर लिया। बक्सों पर चढ़कर वह केला को तोड़कर खा डाला। कहने का मतलब यह कि यहाँ बन्दर ने केले और बक्सों के पारस्परिक सम्बन्ध को समझ करके ही तो उचित प्रतिक्रिया का प्रदर्शन किया। यह प्रयोग कई बन्दरों पर किया गया, लेकिन उनमें से केवल एक ही बन्दर ऐसा था कि वह केलों को तोड़कर खाना और बक्सों पर चढ़कर केला तोड़ना नहीं सीख सका। यह प्रयोग अन्य जानवरों पर भी किया गया। प्रयोगकर्त्ताओं में कोफ्का का भी नाम विशेष उल्लेखनीय है।

इस सिद्धान्त का मुख्य कथन यही है कि हमलोग पूरी परिस्थिति का अध्ययन करते है और उसी अध्ययन के ही समय हमलोगों में सहसा उस परिस्थिति की सूझ आविर्भूत होती है और हमलोग सब कुछ समझ जाते हैं। यह सिद्धान्त विचारणा और चिंतन पर विशेष जोर देता है। बात भी कुछ ऐसी ही है, हमलोग प्रायः बहुत सा कौशल करके नहीं बल्कि, चिंतन करके और समझ-बूझकर सीख जाते हैं। सच्ची बात तो यह है कि यदि हमलोग परिस्थित का अध्ययन न कर सकें तो कुछ

भी सीखना असंभव हो जावे। परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि अन्य सिद्धान्त अमान्य हैं। हम देखते हैं कि अक्षरों का लिखना, टाइप करना इत्यादि उद्योग विधि से ही सीखते हैं और बहुत सी चीजें सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन के द्वारा। अतएव शिक्षण का यह भी एक मान्य सिद्धान्त है, लेकिन यही एकमात्र सिद्धान्त नहीं कहा जा सकता।

Q. 128 State the conditioned reflex theory of Learning. Does it satisfactorily explain all kinds of learning ? (1948S).

सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन द्वारा (Learning by conditioned-Response) सीखने का सिद्धान्त पॉवलॉव द्वारा प्रतिपादित किया गया है। उसने इस सिद्धान्त को विश्वव्यापी (Universal) बनाने के लिए पहले पहल कुत्ते पर प्रयोग किया। वह पालतू कुत्ते को मनोवैज्ञानिक प्रयोगशाला से पूर्ण परिचित कराकर उसे कुछ काल के लिए भूखा रखा। पुनः एक घण्टी बजाने के बाद तुरत उसके सामने खाना रखा गया। खाना देखते ही उसके मुँह में पानी आने लगा। यह प्रयोग कई दिन किया गया और देखा गया कि कुछ दिनों के बाद घण्टी के शब्द मात्र से कुत्ते के मुँह में पानी आ जाता था। पॉवलॉव ने इससे यह प्रमाणित किया कि मुँह में पानी आना खाना देखकर तो स्वाभाविक है, लेकिन घण्टी शब्द से पानी का आना अस्वाभाविक है। परन्तु ऐसा क्यों होता है ? इसी को

व्याख्या करने के लिए उसने कहा कि बारबार के प्रयोग करने से अस्वाभाविक उत्तेजना (Stimulus) का सम्बन्ध स्वाभाविक प्रतिक्रिया (Natural response) से हो गया। उसका कहना है कि जब किसी उत्तेजना से किसी प्रकार की उचित प्रतिक्रिया होती है और यदि उस स्वाभाविक उत्तेजना का सम्बन्ध किसी अस्वाभाविक उत्तेजना से स्थापित हो जाता है तो अस्वाभाविक उत्तेजना भी उस प्रतिक्रिया को उत्पन्न करने में समर्थ होती है, जो स्वाभाविक उत्तेजना के उपस्थित होने पर होती है। ऊपर के उदाहरण में खाना देखने पर मुँह में पानी आने की क्रिया होती थी, लेकिन खाना और घण्टी के शब्द में साहचर्य स्थापित होने पर घण्टी के शब्द से ही मुँह में पानी आने की प्रतिक्रिया होने लगी। यहाँ यह प्रतिक्रिया घण्टी के शब्द से सम्बद्ध हो गई।

इसी प्रकार वाट्सन ने बच्चों पर प्रयोग करके यह दिखलाने का प्रयास किया है कि जानवरों का सीखना मात्र ही नहीं, बल्कि हम मनुष्य भी इसी सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन के द्वारा सीखते हैं। यहाँ, इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि इस प्रकार के सीखने में अस्वाभाविक उत्तेजना को स्वाभाविक उत्तेजना के पहले, सीखने वाले के सामने उपस्थित करना चाहिए और इन दोनों उत्तेजनाओं के उपस्थित करने के समय में तीस सेकण्ड से अधिक का व्यवधान नहीं होना चाहिए, अन्यथा अस्वाभाविक उत्तेजना और प्रतिक्रिया में सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सकता। दूसरी बात

ध्यान देने योग्य यह है कि अस्वाभाविक उत्तेजना को सबल और सीखनेवाले को सक्रिय होना आवश्यक है। यदि उत्तेजना सबल न रही या सीखनेवाला निष्क्रिय रहा तो वह कुछ भी नहीं सीख सकेगा। व्याघातक तथ्यों को अलग करना भी आवश्यक है। इसके अतिरिक्त जीव (Organism) का वृहत्‌मस्तिष्क सुरक्षित रहना आवश्यक है। यदि मस्तिष्क में किसी प्रकार की चोट वगैरह हो तो इस प्रकार का सीखना नहीं हो सकता। ये उपर्युक्त बातें सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन के द्वारा सीखने के लिए आवश्यक हैं।

व्यवहारवादियों का कहना है कि सभी प्रकार का सीखना सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन के द्वारा होता है। दूसरे पक्ष के मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन भी सीखने का एक प्रकार है, लेकिन इसी को सीखने का एक मात्र सिद्धान्त मानना अनुचित है। अब हमें यह देखना है कि वस्तुतः सभी प्राणी अपने जीवन में सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन के ही द्वारा सीखते हैं या नहीं। यदि विचार किया जाय तो मालूम होगा कि बहुत कुछ हमलोग इस सिद्धान्त के अनुसार ही सीखते हैं। यह सिद्धान्त जीवन के प्रायः कई स्थलों पर लागू होता है। हम डरना, चाहना और किसी पदार्थ को न चाहना इत्यादि सम्बद्ध-प्रत्यावर्त्तन के ही द्वारा सीखते हैं। हमलोग इसे भी मानने के लिए तैयार हैं कि वाट्सन और पॉवलॉव ने इस सिद्धान्त को प्रयोग द्वारा प्रमाणित किया है। परन्तु यह सब होते हुए भी इसमें कुछ दोष हैं। पहली बात तो यह है कि इस सिद्धान्त के

आधार पर हम सभी शिक्षणों की व्याख्या नहीं कर सकते, क्योंकि बहुत सी चीजें हमलोग क्रियात्मक या अन्तर्दृष्टि द्वारा सीखते हैं। दूसरा दोष इसमें यह है कि यह सीखने का यान्त्रिक (Mechanical) प्रकार है, यह विधि अभी तक अचेतन प्रतिक्रियाओं में ही सफल हुई है। इस सिद्धान्त में बुद्धि का कोई स्थान ही नहीं है, लेकिन बहुत से शिक्षणों में विशेष रूप से बुद्धि की ही आवश्यकता पड़ती है।

अतः हमलोग अब निस्संदेह यह कह सकते हैं कि यह सिद्धान्त सभी स्थलों में लागू नहीं होता और न तो सभी उसे हमलोग सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन के द्वारा सीखते हैं। इसलिए यह सिद्धान्त कदापि सभी प्रकार के शिक्षण की संतोष पूर्ण व्याख्या नहीं कर सकता। सच्ची बात तो यह है कि हमलोगों का सीखना क्रियात्मक, सम्बद्ध प्रत्यावर्त्तन और अन्तर्दृष्टि इन तीनों के सहयोग से होता है।

Q. 129 Describe briefly the different laws of learning.

यों तो सीखने के कई नियम हैं, लेकिन उनमें से प्रधान अभ्यास नियम (Law of exercise), परिणाम नियम (Law of effect), और तत्परता का नियम (Law of readiness) हैं। इसलिए हम इन्हीं तीन नियमों का यहाँ वर्णन करेंगे।

अभ्यास नियम के अनुसार यदि किसी काम को बारबार दोहराया जाय तो वह काम सीख लिया जाता है।

थार्नडाइक का कहना है कि यदि किसी खास उत्तेजना के मौजूद होने पर कोई प्राणी किसी विशेष प्रकार की प्रतिक्रिया (Response) करता है और बराबर उस उत्तेजना के उपस्थित होने पर उस प्रतिक्रिया को दोहराता रहे तो वह उस प्रतिक्रिया को करना सीख जाता है। इसके अनुसार किसी प्रतिक्रिया की पुनरावृत्ति ही उस प्रतिक्रिया को सीखने के लिए पर्याप्त है। प्रतिक्रिया को यदि बारबार दोहराया न जाय तो उस प्रतिक्रिया को नहीं सीखा जा सकता। यदि चूहे को भ्रांतिबक्स से बारबार निकलने के लिए सिखलाया जाय तो वह अभ्यास के कारण उससे निकलना सीख जाता है। यदि इस नियम पर गंभीर विचार किया जाय तो मालूम होगा कि यह नियम कई स्थलों पर लागू होता है, लेकिन सभी स्थलों के लिए मान्य नहीं है। विचार और इच्छा के बिना कोई प्रतिक्रिया हजारों बार क्यों नहीं दोहराई जावे, लेकिन उस दोहराने से हमलोग कुछ नहीं सीख सकते।

परिणाम नियम (Law of effect) का सिद्धान्त है कि यदि प्राणी को किसी प्रतिक्रिया को करने के बाद सुख मिलता है तो वह उस प्रतिक्रिया को करना सीख जाता है और यदि उसके करने से किसी तरह का दुःख मिलता है तो वह उसे नहीं सीखता है। इसके अनुसार यदि बिल्ली को किसी पिंजड़े में बन्द कर दिया जाय और यदि पिंजड़े का दरवाजा खोलकर बाहर आने पर उसे कुछ भोजन मिल जाय तो वह पिंजड़े का

दरवाजा खोलना सीख जाएगी। यदि दरवाजा खोलने पर उसे कुछ खाना न मिले तो वह दरवाजा खोलना नहीं सीख सकती।

यह नियम भी कुछ अंशो मे सत्य है, लेकिन सभी स्थलों के लिए मान्य नहीं है, क्योंकि बहुत से ऐसे अवसर आते हैं कि इस नियम की अवहेलना देखी जाती है। परन्तु इतना अवश्य मानना पड़ेगा कि इस नियम की महत्ता शिक्षा विभाग मे देखने में आती है।

तत्परता-नियम (Law of readidess) के अनुसार हम उसी क्रिया को सीखते हैं जिसको सीखने के लिए हम इच्छुक रहते हैं। यदि कोई चीज सिखाई जावे और हमारी रुचि उसमें न हो तो हम कुछ भी नहीं सीखते हैं। यह नियम बहुत अंशों में मान्य है। प्रायः स्कूल और कॉलेजो में यही देखने में आता है कि जिस पाठ को सिखने के लिए विद्यार्थी तैयार रहता है उसे शीघ्र सीख जाता है, लेकिन जिसको सीखने के लिए वह तैयार नहीं रहता, उसे नहीं सीखता है।

इन नियमों के अतिरिक्त सीखने के और भी कई उपनियम हैं, लेकिन सच्ची बात तो यह है कि अकेला कोई भी नियम सभी प्रकार की व्याख्या करने में असमर्थ है। हाँ, सार्थकता कुछ अंशों में सभी नियमों में है।

Q. 130 What is habit? What are different rules to form and to break a habit?

जब किसी काम को बारबार इच्छापूर्वक ध्यान के साथ

करते हैं तो उस काम को करने की आदत पड़ जाती है। आदत पड़ने पर उस काम को करने के लिए फिर ध्यान देने की जरूरत नहीं पड़ती और वह काम स्वतः यन्त्रवत् होता रहता है। अभ्यासजन्य क्रियायों को हमलोग अपने जीवन मे अर्जित करते हैं। आदत के कामों को करने में बड़ी आसानी और फुर्ती रहती है। टहलना, बैठना, टाइप करना, सिगरेट पीना आदि क्रियाएँ अभ्यासजन्य (Habitual actions) कहलाती हैं। पहले इन कामों को इच्छा के साथ बारबार किया जाता है बाद में उन कामों को करने की आदत हो जाती है। आदत में एकरूपता (Uniformity), प्रतिपन्नता (Accuracy) और क्षिप्रता (Quickness) रहती है। न तो इसमें ध्यान की जरूरत पड़ती है और न किसी प्रकार की थकावट मालूम होती है। जो कार्य पुनरावृत्ति के फलस्वरूप विना ध्यान के होता है उसी को आदत कहते हैं।

आदत डालने के लिए किसी काम को करने का संकल्प कर लेना चाहिए और उस संकल्प को शीघ्रातिशीघ्र क्रिया रूप में परिणत कर देना चाहिए।

जबतक उस काम को करने की पूरी आदत न हो जाय तब-तक उस काम में किसी प्रकार का प्रमाद नहीं आने देना चाहिए, क्योंकि अंश मात्र का प्रमाद भी नई आदत बनाने में घातक सिद्ध होता है।

जबतक पूर्ण अभ्यास न हो जाए तबतक उस काम को बराबर दोहराते रहना चाहिए। टाइप राइटिंग की आदत डालने के लिए यह जरूरी है कि रोज थोड़ी-थोड़ी टाइप की जावे। प्राय: किसी आदत को डालने के लिए इन्हीं नियमों का पालन करना चाहिए।

आदतों को दूर करने के लिए भी कुछ नियमों का पालन करना जरूरी है।

जिस आदत को छोड़ना हो उसे पुनः कभी न करने की दृढ़ प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए और उसे कभी न करना चाहिए।

किसी आदत को छोड़ने के लिए उसी प्रकार की दूसरी आदत लगानी चाहिए ताकि उसको छोड़ने में कष्ट न हो। यदि किसी को गाँजा पीने की आदत छोड़नी हो तो सिगरेट पीने की आदत लगानी चाहिए ताकि वह उस अभाव का अनुभव न करे।

ऐसे वातावरण में रहना चाहिए जहाँ उसे करने का अवसर ही न मिले। यदि किसी आदमी को सिनेमा देखने की आदत छोड़नी है तो उसे देहात में चला जाना चाहिए जहाँ सिनेमा का अभाव रहता है।

कभी-कभी जानकर उसी काम को करने से भी आदत छूट जाती है। ऐसा प्रयोग करके अपने पर देखा जा सकता है।

फिर भी किसी बुरी आदत को छोड़ने के लिए यह जरूरी है कि मनुष्य अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखे। ऐसा करने पर बुरी आदत अपने आप दूर हो जाएगी।

Learning

Q. 131 Describe the trial error process of learning by animals. Does this show the marks of intelligence? (1949 S)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १२१ का उत्तर देखें। उसी की आलोचना में आपको यह भी मिल जाएगा कि जानवर बुद्धि का भी प्रदर्शन करते हैं क्योंकि गलतियों को छोड़ना, चोट लगने पर उस रास्ता का त्याग करना आदि उसके बुद्धि के ही परिचायक हैं।

Q. 132 Discuss if human beings learn generally by trial and error like animals (1950 A.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १२४, १२७ और १२८ का उत्तर देखें।

Q. 133 How is habit formed? Indicate its practical usefulness (1950 S.)

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १३० का उत्तर देखें।

इसकी उपयोगिता का वर्णन करते समय यह व्यक्त कर देना जरूरी है कि अभ्यास (आदत) से हम किसी काम को करने में आसानी का अनुभव करते हैं। वह काम बहुत जल्दी हो जाता है। थकावट नहीं मालूम होती है। काम करने में रुचि रहती है आदि। इन्हीं बातों की सविस्तार व्याख्या करें।

Q. 134 Analyse the trial-error process of

learning by animals. Does it show any mark of intelligence ?

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १३१ का उत्तर देखें।

CHAPTER 15.

MISCELLANEOUS.

Q. 135 Write short notes on any two of the following. (1944 A.)

(a) Reflex action.
(b) Types of imagery.
(c) Affection.
(d) Illusion.

(a) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १०४ देखें।

(b) इसके लिए प्रश्न नम्बर ७८ देखें।

(c) इसके लिए प्रश्न नम्बर १४० (c) देखें।

(d) इसके लिए प्रश्न नम्बर ४८ देखें।

Q. 136 Write short notes on any three of the following. (1945 A.)

(a) The law of continuity.

(b) After sensation,

(c) Conflict of motives.

(d) Pleasure and unpleasure.

(a) इस प्रश्न के उत्तर के लिए चेतना निरंतरता देखें।

(b) After sensation इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १४१ (c) देखें।

(c) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १०६ सन् १६४४ A. देखें।

(d) इस प्रश्न के लिए प्रश्न नम्बर १४० का उत्तर देखें।

Q. 137 Write short notes on any three of the following. (1945 S.)

(a) Reflex action.

(b) Attributes of sensation.

(c) Memory images.

(d) Introspection.

(a) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १३५ सन् १६४४ A. देखें।

(b) इसके उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर २६ सन् १६४४ A. देखें।

(c) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १४१ सन् १६४४ S. देखें।

(d) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७ सन् १६४४ S. देखें।

Q. 138 Write notes on any two. (1946 A.)

(a) Reflex-action.

(b) Instinctive action.

(c) Recognition.

(d) Expressions of emotion.

(a) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १३५ सन् १६४४ A. देखें।

(b) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १०३ देखें।

(c) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६६ सन् १६४७ S. देखें।

(d) इसके उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ६५ सन् १६४६ S. देखें।

Q. 139 —Write short notes on any two of the following. (1946 S.)

(a) Attributes of sensation.

(b) Illusion.

(c) Bodily attitude in attention.

(d) Personality.

(a) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ११७ सन् १६४५ S. देखें।

(b) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ४८ देखें।

(c) इसके उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ५३ सन् १६४४ S. देखें।

(d) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ११५ सन् १६४४ A. देखें।

Q. 140 - Write short notes on the following. (1947 A.)

(a) Stimulus, response and environment.

(b) Fluctuation of attention.

(c) Pleasure and unpleasure.

(a) उत्तेजना (Stimulus) उस पार्थिव (Physical) शक्ति (Energy) को कहते हैं जो हमारी किसी ज्ञानेन्द्रिय को प्रभावित करती है और जिसके फलस्वरूप वह इन्द्रिय क्रियाशील बन जाती है। उत्तेजना कई प्रकार की होती है, जैसे, आकाश प्रकम्पन (Ether vibration) प्रकाश तरंग (Light-waves), रस और गंधादि। एक प्रकार की उत्तेजना एक ही ज्ञानेन्द्रिय को प्रभावित करती है, दूसरी को नहीं। कान के लिए ध्वनि और आँख के लिए रंग उत्तेजना होगा। जिसका असर हमारी इन्द्रिय पर नहीं पड़ता उसे उत्तेजना नहीं कह सकते।

प्रतिक्रिया (Response) जब कोई उत्तेजना हमारी किसी इन्द्रिय के सम्पर्क में आने के कारण हमारे मन को प्रभावित करती है तो उस समय हमारे मन में क्रियात्मक वृत्ति उत्पन्न होती है और उस वृत्ति के फलस्वरूप बाहरी वातावरण में किसी प्रकार की तबदीली होती है जिसे हम प्रतिक्रिया कहते हैं। किसी उत्तेजना के प्रतिकार के लिए जो क्रिया होती है उसी को प्रतिक्रिया कहते हैं। प्रतिक्रिया कई तरह की होती है। मान-लीजिए हमारी नाक में कोई चीज घुस जाती है और हमें छींक

आ जाती है तो यहाँ जो चीज नाक में चली गई है वह उत्तेजना है और छींक आना प्रतिक्रिया है।

वातावरण (Environment) जिस प्रकार से कोई उत्तेजना हमारे मन को ज्ञानेन्द्रिय द्वारा प्रभावित करती है उसी प्रकार वातावरण हमारे सभी व्यवहारों को प्रभावित करता है। उत्तेजना का प्रभाव तो सीमित पड़ता है, किंतु वातावरण का असर बहुत अधिक पड़ता है। वातावरण कई प्रकार का होता है और इन सभी का प्रभाव हमारे व्यक्तित्व पर अमिट पड़ता है। जीव जिस वातावरण में रहता है उसी के मुताबिक वह अपने आप को प्रवाहित करता है। जीव के लिए आन्तारिक वातावरण उतनी ही महत्ता का है जितना की बाहरी वातावरण के असर से कोई नहीं बच सकता और इसी पर जीवन की सफलता और विफलता निर्भर करती है।

(b) ध्यानचांचल्य (Fluctuation of attention) यदि हमलोग किसी चीज (उत्तेजना) पर अपना ध्यान लगाते हैं तो उस पर बराबर हमारा ध्यान नहीं रहता है, बल्कि कभी उस चीज पर रहता है तो कभी दूसरी चीज या विषय पर चला जाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि ध्यान हमलोगों का स्थिर नहीं रहता, अपितु बराबर डाँवाँडोल रहता है। प्रयोग करने पर देखा जाता है कि ध्यान किसी चीज पर २ ३ सेकण्ड से अधिक देर तक नहीं टिकता है। यदि हम किसी घड़ी की आवाज पर ध्यान लगाएँ तो हमें मालूम

होगा कि कभी आवाज ऊँची सुनाई देती है तो कभी नीची। आवाज में यह उतार-चढ़ाव ध्यान-चांचल्य की वजह से ही होता है। खोज करने पर मालूम हुआ है कि ध्यान चांचल्य इन्द्रिय, पेशी और मस्तिष्क की थकावट के ही कारण होता है। कभी-कभी हमारा ध्यान एक चीज से दूसरी चीज पर रक्त संचार की गति की असाधारणता से भी होता है। यों तो हम जब-तक चाहें तबतक अपने ध्यान को किसी चीज पर लगाए रह सकते हैं, किंतु ध्यान का विषय ध्यान-चांचल्य के कारण कभी हमारे चेतना केन्द्र में और कभी चेतना सीमान्त (Fringe of consciousness) में रहेगा।

(c) सुख और दुःख (Pleasure and unpleasure)

हमारे मन के तीन पहलू हैं, (१) प्रज्ञात्मक (Cognitive) (२) क्रियात्मक (Conative) और (३) भावात्मक (Affective)। भावात्मक पहलू के भी कई प्रकार हैं, किंतु सुख और दुःख हमारे भाव (Feeling) के दो प्रकार हैं। भाव हमारा आत्मगत (Subjective) अनुभव है। हम नित्यप्रति साधारण भाषा में प्रयोग करते हैं कि इस समय हमारे मन में सुखद या दुःखद भावों का ताँता लगा हुआ है। हमारे अनुभव या तो सुखद (Pleasant) होते हैं या दुःखद (Unpleasant)। परन्तु कुछ मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि इन दो प्रकार के भावों (Feelings) के अतिरिक्त भी अन्य प्रकार के भाव होते हैं। यह दृष्टिकोण बहुत को मान्य है और बहुतों को अमान्य

है। जो केवल दो ही किस्म के भाव को मानते हैं उनका कहना यह है कि कोई अनुभव हमें या तो सुखद मालूम होता है या दुःखद। इसलिए भाव दो ही प्रकार के होते हैं। यहाँ विवाद में न पड़कर यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि जब हम किसी क्रिया को करते हैं और उसमे सफलता मिलती है तो हमारे मन में सुखद भाव उत्पन्न होता है और जब उसमें असफलता मिलती है तो दुःखद भाव उत्पन्न होता है। प्रज्ञान (Cognition) से भी भाव की उत्पत्ति होती है। दुःखद भाव और पीड़ा (Pain) को एक ही नहीं समझना चाहिए, क्योंकि दुःखद भाव आत्मगत होता है, लेकिन पीड़ा (Pain) विधेयात्मक (Objective) होती है। भाव के ये दोनों प्रकार एक दूसरे के विरोधी हैं, अर्थात् एक समय किसी व्यक्ति मे या तो दुःखद भाव रह सकता है या सुखद, लेकिन दोनों नहीं। ये दोना ही मात्रा (Degree) में कम या अधिक हो सकते है। प्रत्येक प्रकार का भाव निश्चित काल तक रहता है इस प्रकार हम देखते हैं कि इन भावों का आविर्भाव और विनाश भी होता रहता है।

Q. 141 Write short notes on.

(a) Introspection.

(b) Temperament.

(c) After image and memory image. (1946 S.)

(a) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७ सन् १६४४ S. देखें।

(b) धातु स्वभाव (Temperament) मनुष्य की उस स्थायी (Permanent) मानसिक प्रवृत्ति को (Mental tendency) जिसकी वजह से उसके व्यवहार, विचार और आदर्श आदि एक विशेष प्रकार के होते हैं धातु स्वभाव कहते हैं। जिस प्रकार स्थायीभाव हमलोगों में स्थायी रूप से होता है उसी प्रकार धातु स्वभाव भी। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि हमारा धातु स्वभाव कुछ विशेष ग्रंथियों के स्राव (Secretion) पर निर्भर करता है। सच्ची बात तो यह है कि हमारी सभी क्रियाएँ और आदर्श इसीके द्वारा निर्धारित होते हैं। हमलोगों को प्रायः देखने में आता है कि कुछ लोग सदा प्रसन्न रहने की कोशिश करते हैं या कुछ लोग बहुत चिड़चिड़े मिजाज के होते हैं। यह स्वभाव का परिवर्त्तन और अन्तर हमलोगों में इसी के कारण होता है। इसी पर अधिकांश हमारे जीवन की सामाजिक सफलता और असफलता मिलती है। मनोवैज्ञानिकों ने धातु स्वभाव के आधार पर मनुष्यों को बाँटने की कोशिश की है। इसमें प्राचीन काल से लेकर अबतक लोगों ने तरह-तरह की खोजें की हैं। वर्त्तमान में विदेशी मनोवैज्ञानिकों ने इस सम्बन्ध मे बहुत सी महत्त्वपूर्ण खोजे की हैं।

(c) अनुप्रतिबिम्ब (After image) कभी-कभी ऐसा होता है कि हमलोग कोई चीज देखते हैं और वह चीज हमलोगों के सामने से हटा दी जाती है तिस पर भी कुछ देर के लिए ऐसा मालूम होता है कि वह चीज हमारे सामने है। मान लीजिए

आप सूर्य की ओर देख रहे हैं, तो उधर से आंख फेरने पर आप को वैसा ही एक देदीप्यमान वृत्त दिखलाई देता है और पुनः थोड़ी देर मे विलीन हो जाता है। इसी व्यापार (Phenomenon) को अनुप्रतिबिम्ब या अनुसंवेदना (After sensation) कहते हैं। यहां उत्तेजना के अभाव म हमे उत्तेजना की संवेदना होती है। अनुप्रतिबिम्ब दो प्रकार का होता है (१) भावात्मक अनुप्रतिबिम्ब (Positive after-image) और अभावात्मक अनुप्रतिबिम्ब (Negative after-image)। भावात्मक में हमें मौलिक उत्तेजना के ही सदृश संवेदना होती है, लेकिन अभावात्मक मे पूरकवर्ण (Complementary colour) की। ऐसा दृष्टि संवेदना मे ही होता है, लेकिन भावात्मक अनुप्रतिबिम्ब अन्य इन्द्रियों द्वारा भी होता है।

स्मृति प्रतिमा (Memory image) जब हम गत (Past) घटनाओं का चित्र, स्मृति के आधार पर अपने मानस पटल पर खींचते हैं तो उसे स्मृति प्रतिमा कहते है। इसका आधार स्मृति ही है। अपने गत अनुभव में किसी प्रकार की कमी-बेशी करने की कोशिश नहीं करते हैं, बल्कि उसी मौलिक रूप में उसकी प्रतिमा अपने मन में खींचते हैं। जब हम अपने मित्र की अनुपस्थिति मे उसके मुख मण्डल को याद करते हैं तो हमें स्मृति प्रतिमा का उदाहरण मिलता है। इसी प्रकार सिनेमा से घर लौटने पर जब किसी गाने की कल्पना करते हैं तो हम स्मृति का ही सहारा लेते हैं। स्मृति प्रतिमा की शक्ति सभी

मनुष्यों में होती है, किंतु किसी की शक्ति दृष्टि प्रतिमा के लिए अधिक होती है तो किसी की ध्वनि प्रतिमा के लिए। इसी प्रकार अन्य मनुष्यों में भी विभिन्न प्रकार की प्रतिमाओं की शक्ति विद्यमान रहती है। हम में जितनी इन्द्रियाँ (Sense-organs) हैं उतनी प्रकार की प्रतिमाएँ भी होती हैं। गाल्टन (Galton) इत्यादि मनोवैज्ञानिकों ने मनुष्यों को प्रतिमाओं के आधार पर बाँटने की कोशिश की है।

Q. 142 Write short notes on any three of the following. (1948 A.)

(a) Reflex-action.

(b) Rationalization.

(c) Habit.

(d) Illusion.

(a) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १३५ सन् १९४४A. देखें।

(b) युक्त्याभास (Retionalization) जब मनुष्य की इच्छाएँ तृप्त नहीं होती हैं तो उन इच्छाओं का दमन हो जाता है और वे अचेतन मन में चली जाती हैं। वहाँ जाकर वह बहुत ही प्रबल हो जाती हैं और पुनः चेतन मन में आकर अपनी संतुष्टि चाहती हैं। जब उनका स्पष्ट प्रकाशन असंभव हो जाता है तो वे अपनी संतुष्टि अस्पष्ट (Indirect) रूप से विभिन्न प्रकार से करती हैं। तब मनुष्य अपने विभिन्न प्रकारके व्यवहारों की व्याख्या उन युक्तियों से करता है जो समाज के लिए मान्य

हैं। कहने का अभिप्राय यह है, हम अपने किसी प्रकार के व्यवहार का युक्तिसंगत कारण युक्त्याभास के ही द्वारा करते हैं। जब हम में किसी प्रकार की बुराई आ जाती है तो हम उसे बुरा नहीं समझते, बल्कि उस बुराई को ठीक समझाने की कोशिश करते हैं। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि हम किसी चीज को अपनाना चाहते हैं, लेकिन किसी त्रुटि के कारण वह चीज हमें प्राप्त नहीं होती है, तब हम उस चीज में ही दोष निकालने लगते हैं और कहने लगते हैं कि उसमें बहुत से दोष हैं, इसलिए हमने कोशिश नहीं की। जब विद्यार्थी परीक्षा में फेल हो जाते है तो प्रश्न पत्र या शिक्षक को दोष देने लगते हैं, लेकिन अपनी गलती स्वीकार नहीं करते। जब कोई व्यक्ति उचित आदमी को कोई काम न देकर किसी अयोग्य आदमी को दे देता है तो वह अपने इस व्यवहार के कारणों को बहुत अच्छाई के साथ लोगों को समझाता है। हम अपना दोष बराबर दूसरे के सर पर मढ़ना चाहते हैं। ये सब युक्त्याभास के ही प्रकार हैं।

(c) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १३४ देखें।

(d) इसके उत्तर के लिए प्रश्न नं० १३५ सन् १६५४A देखें।

Q. 143 Write short notes on any three of the following. (1948 S.)

(a) Law of effect.
(b) Instinctive action.
(c) Stimulus and response.
(d) Laws of Association.

(a) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १२६ देखें।

(b) इसके उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर १३८ सन् १६४३ A देखें।

(c) इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १४० सन् १६४७ A देखें।

(d) इस प्रश्न के उत्तर के लिए प्रश्न नम्बर ७१ सन् १६४७ A देखें।

Miscellaneous.

Q. 144 Write short notes on any two of the following. (1949 A.)

(a) Instinct.

(b) Habit.

(c) Fear.

(d) Abnormal psychology.

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १३८ (b), १४२ (c), ६४, और ११ (२) का उत्तर देखें।

Q. 145 Write notes on any two of the following. (1949 S.)

(a) Image type.

(b) Reflex action.

(c) Recognition.

(d) Spontaoneous attention.

इस प्रश्न के उत्तर के लेये प्रश्न नम्बर १४२ (a), १३८ (c), १३५ (b) और और ५२ (२) का उत्तर देखें।

Q. 146 —Write short notes on any two of the following. (1950 A)

(a) Heredity.

(b) Motive.

(c) Recognition.

(a) Association.

इस प्रश्न के उत्तर के लिये प्रश्न नम्बर १४५ (c), ५१, १०८ का उत्तर देखें।

(a) Heredity:

मनुष्य अथवा अन्य जीव की बहुत सी खूबियाँ वंशानुक्रम से प्राप्त होती हैं। मनुष्य की बुद्धि, व्यक्तित्व आदि वंशानुक्रम के परिणाम हैं। परन्तु इन शक्तियों का विकास वातावरण में पूर्ण रूपेण होता है। इसकी सविस्तार व्याख्या के लिये किसी पाठ्य पुस्तक में वंशानुक्रम और वातावरण (Heredity and Environ ment) पढ़ें।

Q. Write short notes on: (1950 S.)

(a) After sensation.

(b) Instinct.

(c) Spontaneous attention.

(d) Personality.

इस प्रश्न के (a) के लिये प्रश्न नम्बर १४१ (c), (b) के लिये १४३ (h), (c) के लिये १४५ (d) और (d) के लिये ११८ का उत्तर देखिये।

Patna University I. A. Questions.

1944 (Annual.)

1. Show with concrete examples how Psychology deals with experience and behaviour.
2. Show how mind is related to body.
3. State and illustrate the attributes of sensation.
4. Explain and illustrate what is meant by Emotion. Show its relation to instinct
5. Distinguish between human and animal learning, using examples of both.
6. What is attention ? Explain and illustrate the different kinds of attention.
7. Distinguish between recall and recognition. Why is it easier to remember meaningful materials than unmeaningful materials ?
8. What is meant by voluntary action ? Illustrate your answer by a concrete example.
9. Write short notes on any two—
   (a) Reflex Action.
   (b) Types of Imagery
   (c) Affection.
   (d) Illusion.

1944 (Supplementary.)

1. What is Psychology ? Explain the methods employed in it.

2. Distinguish between cognition, conation, and affection. Are they separate and independent kinds of mental processes?
3. Describe briefly the structure and function of the eye.
4. Why do we attend to a particular object rather than another? Describe briefly the bodily attitude in attention.
5. What is meant by learning? Can all learning be treated as a blind trial-error process?
6. Distinguish between percept and image with concrete examples.
7. What is meant by retention, state the characteristics of a good memory.
8. Distinguish between thinking and remembering. Is it better to remember by wholemethod or by part-method?
9. Describe the mental processes involved in deciding to go to the study room rather than to the cinema.

1945 (Annual.)

1. What do you consider to be the proper method of Psychology?
2. Point out the distinction between sensation and perception. Analyse the process involved in perceiving a mango.
3. Explain the different kinds of attention. Point out the motor accompaniments of attention.

4 Distinguish a reflex action from an instinct. What are the characteristics of instinct ?

5. Illustrare trial-error theory of learning.

6. What is an emotion ? Point out the bodily changes involved in fear.

7. What do you mean by a good memory ? Distinguish between memory and imagination.

8. Write short notes on any three of the following:

   (a) The law of continuity.

   (b) After sensation

   (c) Conflict of motives.

   (d) Pleasure and unpleasure.

9. Describe with examples the different types of imagery.

1955 (Supplementary.)

1. Define Psychology and show that it includes both experience and behaviour.

2. Briefly describe the structure of the eye, and point out tho stimulus involved in visual sensation.

3. What is attention ? Point out the objective conditions of attention.

4. What is learning ? Distinguish between human and animal learning.

5. Distinguish between a percept and illusion. How do you account for illusion ?

6. Point out the distinction between a percept and an image. Explain recognition.

7. Explain conflict of motives, deliberation and a choice.

8. Write short notes on any three of the following :—

(a) Reflex action, (b) Attributes of sensation, (c) Memory images and (d) Introspection.

9. Describe briefly the conditions of recall.

1946 (Annual)

1. Explain and illustrate how Psychology deals with experience and behaviour.

2. What are the important branches of Psychology ? Briefly show your acquaintance with any two of them.

3. Give a short description of the structure and function of the visual or the auditory sense organs

4. Define attention and describe some of the conditions of attention.

5. What is feeling ? How can it be distinguished from sensation ?

6. Is learning always a trial and error process ? Discuss the nature of learning.

7. Analyse with the help of example, the processes which comprise voluntary activity.

8. Show by the help of example, how perception depends on past experience.

9. Write short notes on any two:—

(a) Reflex action, (b) Instinctive action, (c) Recognition and (d) Expressions of emotions.

1946 (Supplementary.)

1. Distinguish between the method of objective observation and that of introspection.
2. Describe some important functions of the central nervous system in the determination of behaviour.
3. Give an analysis of perception, using an example.
4. Distinguish between learned and unlearned modes of behaviour.
5. Describe and illustrate the different kinds of attention.
6. What is emotion? Indicate some bodily changes in emotion.
7. Distinguish between percept and image by the help of examples.
8. Describe and illustrate the processes involved in memory.
9. Write short notes on any two of the following:
   (a) Attributes of sensation. (b) Illusion. (c) Bodily attitude in attention. (d) Personality.

1947 (Annual)

1. Define Psychology and explain the method employed in it.
2. Describe with the help of examples, the various attributes of sensation. Define attributes of pitch and timber of auditory sensation.
3. What is learning? Distinguish between human learning and animal learning.

4. Define illusion and illustrate its various types. Why do illusions occur ?
5. What is meant by perception ? How does a percept differ from an image ?
6. Distinguish between recall and recognition. Can you say that what cannot be recalled is not retained by the mind ? Give reasons for your answer.
7. What is emotion ? State the bodily changes involved in emotion of anger.
8. Give a short account of the factors which determine the personlity of an individual.
9. Write notes on :-
(a) Stimulus, response and environment, (b) Fluctuation of attention and (c) Pleasure and unpleasure.

1947 (Supplementary)

1. What is the proper subject-matter of Psychology ? Indicate its scope.
2. Briefly describe the structure and the general functions of the central nervous system.
3. How is a reflex action distinguished from an instinctive action ? State the characteristics of instincts.
4. State and explain the various conditions of attention.
5. Explain trial-error process of learning. Can all learnig be treated as trial-error process ?
6. Distinguish between sensation and perception. State the mental processes involved in perceiving an orange.

7. State and illustrate the various laws of Associations.
8. What do you understand by conflict of Motives? How can an individual get out of such a conflict?
9. Write notes on :—
   (a) Introspection.
   (b) Temperament.
   (c) After-image and memory-image.

1948 (Annual,)

1 What are the main uses of the study of Psychology?
2. What is attention? Describe the conditions of attention.
3. Explain the nature and causes of forgetting with examples
4. Describe the characteristics of emotion of fear or anger. What bodily changes take place when an individual is angry or afraid?
5. Distinguish between a percept and image. What do you mean by image type?
6. Describe the learning process. Give a theory of learning.
7. Describe the nature of thinking. How does reasoning differ from thinking? Give an example
8. Explain the biological and social factors in the formation of personality.
9. Write notes on any three of the following :

(a) Reflex-action,
(b) Rationalization,
(c) Habit and
(d) Illusion.

1948 (Supplementary)

1. Write notes on :
   (a) Abnormal Psychology.
   (b) Social Psychology.
2. Describe the characteristics of visual or auditory sensation.
3. Explain the process of perceiving an object with examples.
4. Describe the process of retention, recall and recognition in remembering an event.
5. Explain the conditioned-reflex theory of learning. Does it satisfactorily explain all kinds of learning.
6. Give the characteristics of feeling. How does feeling differ from sensation ?
7. What do you understand by the term Personality. Explain the social factors in the formation of personality
8. Give an analysis of the process of voluntary action with an example.
9. Write notes on any three :
   (a) Law of effect
   (b) Instinctive action.
   (c) Stimulus and Response and.
   (d) Laws of Association.